Con. 3. VIII-20.49
320

अंक 8
संख्या 20

सोमवार
13 जून
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप
[अनुच्छेद 216 से 247 तथा 111-क और 111-घ पर विचार] ...1193-1267

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 13 जून सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः आठ बजे, अध्यक्ष महोदय (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का प्रारूप—(*जारी*)

अनुच्छेद 216

***अध्यक्ष:** हमने उस दिन अनुच्छेद 186 पर विचार समाप्त कर दिया था। मुझसे कहा गया है कि आज हम अनुच्छेद 216 से प्रारम्भ करें।

(संशोधन संख्या 2739 और 2740 पेश नहीं किये गये।)

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 216 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 216 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 217

(संशोधन संख्या 2741 और 2742 पेश नहीं किये गये।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) में 'next succeeding clause' (आगामी अनुवर्ती खंड) शब्दों के स्थान में 'clause (3)' [खंड (3)] शब्द, कोष्ठक और संख्या तथा 'preceding clause' (पूर्ववर्ती खंड) शब्दों के स्थान में 'clause (1)' [खंड (1)] शब्द, कोष्ठक और संख्या रखे जायें।'

इस संशोधन के पेश करने का केवल यह कारण है कि इस पर एक बड़ा महत्त्वपूर्ण संशोधन निर्भर करता है और इसी कारण मैंने यह उपक्रम किया है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): क्या मैं संशोधन संख्या 87-ख और 87-ग पेश कर सकता हूं? वे केवल औपचारिक हैं। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जायें।''

''कि अनुच्छेद 217 के खंड (3) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जायें।''

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): मैंने भी एक संशोधन की सूचना दी है।

***अध्यक्ष:** मुझे कोई संशोधन दिखाई नहीं दिया है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** मैंने उसकी सूचना आज प्रात:काल दी थी। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं.....

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): उनके संशोधन की प्रतियां हमें नहीं मिली हैं।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): हम यह नहीं समझ सकते हैं कि वे क्या पेश कर रहे हैं।

***अध्यक्ष:** हमारे बैठने के कुछ मिनट पूर्व ही उन्होंने संशोधन की सूचना दी है। परन्तु मुझसे कहा गया है कि वह न्यूनाधिक रूप में अक्षरश: वैसा ही है जैसा कि संशोधन संख्या 2741 है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, इस विषय के समान महत्त्वपूर्ण विषय में मैं नहीं समझता हूं कि बिना समुचित सूचना के किसी को संशोधन पेश करने दिया जाये। हम संशोधन संख्या 2741 को पेश करने की प्रस्थापना नहीं करते हैं और मैं नहीं समझता हूं कि हमारे संशोधन को पेश करने का अधिकार किसी अन्य व्यक्ति को है।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** यदि आप सदस्यों को इस प्रकार संशोधन पेश करने का अधिकार देंगे तो इसका कभी अन्त नहीं होगा और केवल समय की बरबादी होगी।

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई : जनरल): जिस संशोधन को सदस्य पेश करना चाहते हैं, वह वैसा ही है जिसको उन सदस्यों द्वारा पेश नहीं किया जा रहा है, जिन्होंने उसकी सूचना दी थी। वे उस संशोधन को पेश करना चाहते हैं जिसको उन्होंने पेश नहीं किया है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, आप जो कुछ विनिश्चय करेंगे उस पर मैं आपत्ति नहीं करता हूं। परन्तु मैं उस संशोधन की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं, जिसकी मैंने गत सप्ताह सूचना दी थी और जिसको आपने पेश नहीं होने दिया था। मैं नहीं समझ पाता हूं कि इस विषय में अपवाद क्यों किया जाये।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** नियमों के अन्तर्गत हमें संशोधनों पर संशोधन पेश करने की आज्ञा है, यदि हम सभारम्भ से पूर्व सूचना दे दें। इस संशोधन में केवल उस विचार का समावेश है जो श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर की विमति टिप्पणी में दिया हुआ है, जो संविधान के मसौदे के अन्त में दी गई है। चूंकि यह महत्त्वपूर्ण विषय है और वे सदस्य, जिन्होंने ऐसे संशोधनों की सूचना दी थी, उन संशोधनों को पेश कर रहे हैं, इस कारण मैं समझता हूं इस अनुच्छेद को बिना चर्चा के और बिना उसके संशोधन पर प्रयत्न के पारित न किया जाये।

***अध्यक्ष:** आपने समय पर सूचना क्यों नहीं दी?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मैंने समय पर सूचना दी, अर्थात् ''सभारम्भ से पूर्व''। और फिर वह संशोधन संख्या 2741 का ही रूप है, जिसको संशोधन संख्या 2743 पर संशोधन के रूप में पेश करना प्रस्थापित किया गया है।

***अध्यक्ष:** ठीक है। सभारम्भ के पूर्व मेरे पास इसकी सूचना आ गई थी। कार्यालय को इसकी प्रतियां बनाने में कुछ समय लगा। अत: इसको पेश न करने की आज्ञा मैं न दे सका।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मैं समझता हूं कि ऐसे मौलिक महत्त्व के अनुच्छेदों को केवल इस आधार पर इस सभा में बिना ध्यान दिये नहीं आने देना चाहिये कि कुछ संशोधन जिनकी सदस्यों ने सूचना दी थी वे पेश नहीं किये गये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** इस सम्बन्ध में मैं एक दो बातें रखना चाहूंगा। यह कदाचित महत्त्वपूर्ण विषय प्रतीत होता है। सर्वप्रथम मैं यह जानना चाहता हूं कि यह संशोधन है अथवा किसी संशोधन पर संशोधन है। यदि यह संशोधन पर संशोधन है तो इसको तब तक पेश नहीं किया जा सकता जब तक कि मूल संशोधन पेश न किया जाये।

***अध्यक्ष:** यह संशोधन संख्या 2743 पर संशोधन है जिसको श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किया जा चुका है। माननीय सदस्य अपनी सूचना में कहते है कि उनका संशोधन संशोधन संख्या 2741, 2742, 2743, 2744 और 2745 पर है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** यदि इसको संशोधन संख्या 2743 पर संशोधन के रूप में माना जाता है तो यह स्पष्ट है कि चूंकि वह संशोधन संख्या 2743 के क्षेत्र से बहुत परे है इसको तब तक पेश नहीं किया जा सकता जब तक कि सदस्य आपको इस बात का संतोष न करा दे कि वह मूल संशोधन का सार रूप में परिवर्तन नहीं कर रहा है। जिस रूप में यह है उस रूप में यह उस संशोधन की सही-सही पुनरावृत्ति है जो सर्वश्री सन्तानम्, अनन्तशयनम आयंगर तथा अन्य सदस्यों के नाम से है।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूं कि इस विषय में डा. अम्बेडकर बहुत संकीर्ण विचार अपना रहे हैं। स्थिति यह है कि अनुच्छेद 217 पर चर्चा हो रही है। एक सदस्य चाहता है कि इस अनुच्छेद का एक विशिष्ट रूप में संशोधन किया जाये। श्री नजीरुद्दीन अहमद चाहते हैं कि इस अनुच्छेद का किसी अन्य रूप में संशोधन किया जाये और वे उसके खंड (2) पर ही सीमित है। बात यही है कि अनुच्छेद 217 पर संशोधन है। मेरे मित्र प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना नियमानुकूल समझे जायेंगे यदि वह यह कहें कि श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा सुझाई गई रीति की अपेक्षा इस अनुच्छेद का जिस प्रकार वे चाहते हैं उस प्रकार संशोधन किया जाये। वह स्पष्ट रूप में श्री नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन पर संशोधन है। यदि इन बातों पर डा. अम्बेडकर इतने संकीर्ण विचारों को अपनायेंगे तो उनको स्वयं अपने कई संशोधन पेश करने में बहुत कठिनाई होगी। उन्होंने पहले भी ऐसा किया है और आगे भी उनको ऐसा करना आवश्यक प्रतीत होगा।

***अध्यक्ष:** मैं इसे संशोधन संख्या 2743 पर संशोधन के रूप में लेता हूं। मैं आदेश देता हूं कि यह नियमानुकूल है।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, मैं आपकी बात न समझ सका।

***अध्यक्ष:** यदि श्री दास छपी हुई सूची के पृष्ठ 285 को पलटें तो उनको संशोधन संख्या 2741 मिलेगा। यह संशोधन न्यूनाधिक रूप में उसी की प्रतिलिपि है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है, आप उसे समझ सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं।

''कि अनुच्छेद 217 के स्थान में निम्न प्रविष्ट किये जायें:

'217. (1) The Legislature of the States in Part I, Schedule I, shall have exclusive power to make laws for the States or for any part thereof in relation to matters falling within the classes of subjects specified in List I (corresponding to Provincial Legislative List).

(2) The Legislature of any State in Part I, Schedule I, shall in addition to the powers under clause (1) have power to make laws for the State or any part thereof in relation to matters falling within the classes of subjects specified in List II, provided however, that the Union Parliament shall also have power to make laws in relation to the same matter within the interior area of the Union or any part thereof and an Act of the Legislature of the State shall have effect in and for the State as long as and as far only as it is not repugnant to any Act of the Union Parliament.

(3) In addition to the powers conferred by the previous subsection, the Union Parliament may make laws for the peace, or order and good government of the Union or any part thereof in relation to all matters not falling within the classes of subjects enumerated in List I and in particular and without prejudice to the generality of the foregoing, the Union Parliament shall have the exclusive power to make laws in relation to all matters falling within the classes of subjects enumerated in List III.

(4) (a) The Union Parliament shall have power to make laws for the peace, order and good government of the States in Part II, Schedule I.

(b) Subject to the general powers of Parliament under sub-section (a) the legislature of the States in Part II, Schedule I, shall have the powers to make laws in relation to matters coming within the following classes of subjects:

Provided however that any law passed by that Unit shall have effect in and for that Unit so long and as far only as it is not repugnant to any law of the Union Parliament.

(5) The power to legislate either of the Union Parliament or the Legislature of any State shall extend to all matters essential to the effective exercise of the legislative authority vested in the particular legislature.

(6) When a law of a State is inconsistent with a law of the Union Parliament or to any existing law with respect to any of the matters enumerated in List I or (List II), the law of the Parliament or as the case may be, the existing law shall prevail and the law of the State shall to the extent of repugnancy be void.' ''

[217. (1) अनुसूची 1 के भाग (1) में के राज्यों के विधान-मंडल को राज्य अथवा उसके किसी भाग के लिये सूची 1 (प्रान्तीय विधायी सूची सम्बन्धी) में उल्लिखित विषयों की श्रेणियों में आने वाले विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त होगी।

(2) खंड 1 के अधीन शक्तियों के साथ-साथ अनुसूची 1 के भाग (1) में के किसी राज्य के विधान मंडल को राज्य अथवा उसके किसी भाग के लिये सूची 2 में उल्लिखित विषयों की श्रेणियों में आने वाले विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की शक्ति होगी, परन्तु संघ-संसद को भी उन्हीं विषयों के सम्बन्ध में संघ के समस्त क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के लिये विधि बनाने की शक्ति प्राप्त होगी और राज्य के विधान मंडल का अधिनियम राज्य में तथा राज्य के लिये तब तक और केवल वहीं तक प्रभावी होगा जहां तक वह संघ-संसद के किसी अधिनियम के विरुद्ध नहीं है।

(3) पूर्व उपधारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों के साथ-साथ संघ-संसद संघ अथवा उसके किसी भाग की शान्ति अथवा व्यवस्था और सुशासन के लिये सूची 1 में गिनाये गये विषयों की श्रेणियों में आने वाले समस्त विषयों के सम्बन्ध में विधि बना सकेगी और विशेषकर तथा उपरोक्त (खंड) की साधारणतया का विरोध किये बिना संघ-संसद की सूची 3 में गिनाये गये विषयो की श्रेणियों में आने वाले समस्त विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त होगी।

(4) (क) संघ-संसद को अनुसूची 1 के भाग (2) में के राज्यों की शान्ति, व्यवस्था तथा सुशासन के लिये विधि बनाने की शक्ति प्राप्त होगी।

(ख) उपधारा (क) के अन्तर्गत संसद की साधारण शक्तियों के अधीन अनुसूची 1 के भाग 2 में के राज्यों के विधान मंडल को विषयों की निम्न श्रेणियों में आने वाले विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की शक्ति होगी।

परन्तु उस एकक द्वारा पारित की गई कोई विधि उस एकक में अथवा उसके लिये तब तक और केवल वहीं तक प्रभावी होगी जहां तक वह संघ-संसद की किसी विधि के विरुद्ध नहीं है।

(5) संघ-संसद अथवा किसी राज्य के विधान मंडल की विधि निर्माण करने की शक्ति का विस्तार उन सब विषयों तक होगा जो उस विशिष्ट विधान मंडल में निहित विधायी प्राधिकार के प्रभावी प्रयोग के लिये नितान्त आवश्यक है।

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

(6) सूची 1 अथवा (सूची 2) में गिनाये गये किसी विषय के सम्बन्ध में राज्य की विधि यदि संघ-संसद की विधि अथवा किसी वर्तमान विधि से असंगत है, तो संसद की विधि अथवा वर्तमान विधि, जैसी भी स्थिति हो, प्रचलित रहेगी और विरोध की मात्रा तक राज्य की विधि शून्य होगी।]

श्रीमान्, मुझे बहुत खेद है कि इस संशोधन को पेश न होने देने के लिये प्रयत्न किया गया था। मैं केवल यह बता देना चाहूंगा कि यह संशोधन अक्षरशः वही है जिसका सुझाव श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने संविधान के मसौदे के परिशिष्ट में पृष्ठ 212-213 पर दिया है।

वास्तव में परिशिष्ट में श्री अल्लादी ने कहा है कि वे मसौदा-समिति के बहुमत से विभिन्न मत रखते हैं और उन्होंने कहा कि उनकी सम्मति में संसद और राज्यों के विधान मंडलों में शक्तियों के विभाजन की योजना इस संशोधन में दिये हुये रूप में होनी चाहिये। जिस संशोधन की सूचना माननीय के. सन्तानम् द्वारा दी गई थी, वह परिशिष्ट में श्री अल्लादी द्वारा सुझाये गये आधार पर थी। मैं सुझाव रखता हूं कि यह विषय बड़े महत्त्व का है जिस पर कि देश का एक प्रसिद्ध स्मृतिज्ञ मसौदा-समिति से भिन्न मत रखता है और इस अनुच्छेद को बिना उचित विचार किये इस सदन द्वारा पारित नहीं होने देना चाहिये। अतः इस संशोधन को पेश करना मैंने अपना कर्त्तव्य समझा। यदि स्वयं श्री सन्तानम् इसको पेश करते तो मैं उसे ज्यादा अच्छा समझता। मैं यह समझता हूं कि सदन को यह जानने का हक है कि श्री अल्लादी द्वारा दिये गये सुझाव को क्यों नहीं माना गया। श्री अल्लादी द्वारा दिया गया सुझाव बहुत ही महत्त्वपूर्ण सुझाव है। वास्तव में विधान के मसौदे में भारतीय सरकार के सन् 1935 के अधिनियम की अक्षरशः पुनरावृत्ति है। परिशिष्ट में श्री अल्लादी ने यह सिद्ध करने के लिये तर्क प्रस्तुत किये हैं कि जिन परिवर्तनों को उन्होंने सुझाया है वे क्यों आवश्यक हैं। उन्होंने कहा है कि जिस समय भारतीय सरकार का अधिनियम पारित किया गया था, यह विनिश्चय नहीं किया गया था कि अवशिष्ट शक्तियां किस में निहित की जायेंगी, वे केन्द्र में होनी चाहिये अथवा प्रान्त में। अतः जिस रूप में धारा बनाई गई है उस रूप में उसका बनाना आवश्यक था। उन्होंने यह भी बताया था कि फैडरल न्यायालय ने 'notwithstanding' (इस बात के होते हुए) शब्द के अर्थ पर बहुत मुकदमेबाजी हो चुकी है। उन्होंने यह भी कहा है कि चूंकि यह अन्तिम रूप में विनिश्चित किया जा चुका है कि अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र की होंगी, इस अनुच्छेद का भिन्न रूप में फिर से मसौदा बनाया जाये और वह उस रूप में हो जिस रूप में उन्होंने सुझाव दिया है और जिस रूप में मेरे संशोधन में दिया गया है। सर्वप्रथम हमें भारतीय सरकार के सन् 1935 के अधिनियम की अक्षरशः नकल नहीं करनी चाहिये, जो कि हमारी दासता का एक विलेख है। अब चूंकि हम नया संविधान बना रहे हैं, हमें केवल पुराने संविधान से हर एक बात अक्षरशः नहीं लेनी चाहिये। इसका एक लाभ यह है कि भारतीय सरकार के सन् 1935 के अधिनियम की धारा 100 की अक्षरशः नकल करने से पूर्वकालीन दासता का जो स्मरण हमें होगा, वह उसमें परिवर्तन कर देने से नहीं होगा। श्रीमान्, दूसरी बात यह है कि यह कहना अधिक तर्कयुक्त है कि विभिन्न राज्यों को

सूची 1 में उल्लिखित विषयों की श्रेणियों में आने वाले विषयों से सम्बन्धित विधि बनाने की अनन्य शक्ति होगी और यह कि सूची 2 में ऐसे विषय होंगे, जिन पर राज्यों और संघ दोनों को विधि बनाने की समवर्ती शक्ति होगी और फिर इसके बाद यह कहना कि जो कुछ शेष रहता है उस पर संघ की शक्ति होगी। इस समय सूची 1 पर संघ-संसद को शक्ति है। श्री अल्लादी ने सुझाव दिया है कि संघ-सूची में जो कुछ दिया हुआ है, वह केवल उदाहरण के रूप में होना चाहिये और जो कुछ शेष रहे वह केन्द्र का हो। यह रूप अधिक तर्कसंगत होगा कि अमुक-अमुक शक्तियां राज्य की होंगी, अमुक-अमुक शक्तियां राज्य और संघ दोनों की होंगी और फिर यह कहना कि जो कुछ शेष रह जाती हैं वे संघ की होंगी। श्री अल्लादी द्वारा दिया गया इस प्रकार का विभाजन हर प्रकार से अधिक तर्कयुक्त तथा अच्छा विभाजन है। जो सुझाव उन्होंने दिया है वह महत्त्वपूर्ण सुझाव है और सदन को उनके तर्कों पर ध्यान देना चाहिये कि वे मसौदे में इस प्रबन्ध को क्यों अधिमान देते हैं, जिसमें कि भारतीय सरकार के अधिनियम की धारा 100 की नकल मात्र है। संविधान के मसौदे में मसौदा समिति पृष्ठ 100 पर स्वयं यह कहती है–

> ''श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का यह मत था कि विधायी विभाजन के पुराने उपक्रम के अनुसरण करने के स्थान में इस खंड का, इस कारण कि अवशिष्ट शक्ति संसद को होगी, प्रारम्भ राज्य की विधायी शक्तियों से किया जाये और फिर समवर्ती शक्ति संव्यवहृत हो और इसके बाद संसद को विधायी शक्तियां हों। चूंकि यह प्रश्न केवल रूपरेखा सम्बन्धी था, सदस्यों के बहुमत ने वर्तमान प्रबन्ध में परिवर्तन न करने को अधिमान दिया।''

मैं नहीं समझ सकता हूं कि मसौदा समिति यह क्यों नहीं अनुभव करती है कि यह अधिक तर्कयुक्त रूप है। केवल यही तथ्य कि भारतीय सरकार का अधिनियम इस रूप में है इस कारण इसे इसी रूप में रखना कोई तर्क नहीं है। अतः मैं सुझाव रखता हूं कि श्री अल्लादी द्वारा सुझाया गया रूप इससे अच्छा रूप है, उसमें कम मुकदमेबाजी है और इससे अधिक स्पष्ट है।

इसके बाद, श्रीमान्, खंड (5) में यह कहा गया है–

> ''संघ-संसद अथवा किसी राज्य के विधान मंडल की विधि-निर्माण करने की शक्ति का विस्तार उन सब विषयों तक होगा, जो उस विशिष्ट विधान मंडल में निहित विधायी प्राधिकार के प्रभावी प्रयोग के लिये नितान्त आवश्यक है।''

श्री अल्लादी ने यह बताया है कि यह खंड आस्ट्रेलिया तथा अमरीका के संविधानों के अनुसार है। उन्होंने कहा है कि संविधान के मसौदे में इस प्रभाव का कोई उपबन्ध नहीं है कि विधि बनाने की शक्ति के साथ किसी उपबन्ध को विधायी प्राधिकार के प्रभावी प्रयोग के लिये नितान्त आवश्यक बनाने की शक्ति है। यह खंड (5) उस शक्ति को देता है। इस खंड से यह अनुच्छेद पूर्ण हो जाता है और यह आस्ट्रेलिया और अमरीका के संविधानों के उपबंधों की एकरूपता ले आता है। जिस रूप का श्री अल्लादी ने सुझाव रखा है वह रूप उत्तम है तथा उसका विषय भी उत्तम है और उससे अनुच्छेद के मसौदे की कमी पूरी हो जाती है। श्रीमान्, मैं अपना संशोधन पेश करता हूं और सदन की स्वीकृति के लिये इसे प्रस्तुत करता हूं।

(संशोधन संख्या 2744 और 2745 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** क्या कोई कुछ कहना चाहता है?

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** कोई नहीं, श्रीमान्।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** हम इस संशोधन को पेश करना नहीं चाहते हैं।

***अध्यक्ष:** मैं प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 217 के स्थान में निम्न प्रविष्ट किया जाये:

'217. (1) The Legislature of the States in Part I, Schedule I, shall have exclusive power to make laws for the States or for any part thereof in relation to matters falling within the classes of subjects specified in List I (corresponding to Provincial Legislative List).

(2) The Legislature of any State in Part I, Schedule I, shall in addition to the powers under clause (1) have power to make laws for the State or any part thereof in relation to matters falling within the classes of subjects specified in List II, provided however, that the Union Parliament shall also have power to make laws in relation to the same matter within the interior area of the Union or any part thereof and an Act of the Legislature of the State shall have effect in and for the State as long as and as far only as it is not repugnant to any Act of the Union Parliament.

(3) In addition to the powers conferred by the previous subsection, the Union Parliament may make laws for the peace, or order and good government of the Union or any part thereof in relation to all matters not falling within the classes of subjects enumerated in List I and in particular and without prejudice to the generality of the foregoing, the Union Parliament shall have the exclusive power to make laws in relation to all matters falling within the classes of subjects enumerated in List III.

(4) (a) The Union Parliament shall have power to make laws for the peace, order and good government of the States in Part II Schedule I.

(b) Subject to the general powers of Parliament under sub-section (a) the legislature of the States in Part II, Schedule I, shall have the powers to make laws in relation to matters coming within the following classes of subjects:

Provided however that any law passed by that Unit shall have effect in and for that Unit so long and as far only as it is not repugnant to any law of the Union Parliament.

(5) The power to legislate either of the Union Parliament or the Legislature of any State shall extend to all matters essential to the effective exercise of the legislative authority vested in the particular legislature.

(6) When a law of a State is inconsistent with a law of the Union Parliament or to any existing law with respect to any of the matters enumerated in List I or (List II), the law of the Parliament or as the case may be, the existing law shall prevail and the law of the State shall to the extent of repugnancy be void.' ''

[217. (1) अनुसूची 1 के भाग (1) में के राज्यों के विधान-मंडल को राज्य अथवा उसके किसी भाग के लिये सूची 1 (प्रान्तीय विधायी सूची सम्बन्धी) में उल्लिखित विषयों की श्रेणियों में आने वाले विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त होगी।

(2) खंड 1 के अधीन शक्तियों के साथ-साथ अनुसूची 1 के भाग (1) में के किसी राज्य के विधान मंडल को राज्य अथवा उसके किसी भाग के लिये सूची 2 में उल्लिखित विषयों की श्रेणियों में आने वाले विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की शक्ति होगी, परन्तु संघ-संसद को भी उन्हीं विषयों के सम्बन्ध में संघ के समस्त क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के लिये विधि बनाने की शक्ति प्राप्त होगी और राज्य के विधान मंडल का अधिनियम राज्य में तथा राज्य के लिये तब तक और केवल वहीं तक प्रभावी होगा जहां तक वह संघ-संसद के किसी अधिनियम के विरुद्ध नहीं है।

(3) पूर्व उपधारा द्वारा प्रदत्त शक्तियों के साथ-साथ संघ-संसद संघ अथवा उसके किसी भाग की शान्ति अथवा व्यवस्था और सुशासन के लिये सूची 1 में प्रमाणित विषयों की श्रेणियों में आने वाले समस्त विषयों के सम्बन्ध में विधि बना सकेगी और विशेषकर तथा उपरोक्त (खंड) की साधारणतया का विरोध किये बिना संघ-संसद की सूची 3 में गिनाये गये विषयो की श्रेणियों में आने वाले समस्त विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त होगी।

(4) (क) संघ-संसद को अनुसूची 1 के भाग (2) में के राज्यों की शान्ति, व्यवस्था तथा सुशासन के लिये विधि बनाने की शक्ति प्राप्त होगी।

(ख) उपधारा (क) के अन्तर्गत संसद की साधारण शक्तियों के अधीन अनुसूची 1 के भाग 2 में के राज्यों के विधान मंडल को विषयों की निम्न श्रेणियों में आने वाले विषयों के सम्बन्ध में विधि बनाने की शक्ति होगी।

परन्तु उस एकक द्वारा पारित की गई कोई विधि उस एकक में अथवा उसके लिये तब तक और केवल वहीं तक प्रभावी होगी जहां तक वह संघ-संसद की किसी विधि के विरुद्ध नहीं है।

(5) संघ-संसद अथवा किसी राज्य के विधान मंडल की विधि निर्माण करने की शक्ति का विस्तार उन सब विषयों तक होगा जो उस विशिष्ट विधान मंडल में निहित विधायी प्राधिकार के प्रभावी प्रयोग के लिये नितान्त आवश्यक है।

[अध्यक्ष]

(6) सूची 1 अथवा (सूची 2) में गिनाये गये किसी विषय के सम्बन्ध में राज्य की विधि यदि संघ-संसद की विधि अथवा किसी वर्तमान विधि से असंगत है, तो संसद की विधि अथवा वर्तमान विधि, जैसी भी स्थिति हो, प्रचलित रहेगी और विरोध की मात्रा तक राज्य की विधि शून्य होगी।]

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) में 'next succeeding clause' (आगामी अनुवर्त्ती खंड) शब्दों के स्थान में 'clause (3)' [खंड (3)] शब्द, कोष्ठक और संख्या तथा 'preceding clause' (पूर्ववर्ती खंड) शब्दों के स्थान में 'clause (1)' [खंड (1)] शब्द, कोष्ठक और संख्या रखे जाये।''

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 217 के खंड (2) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जाये।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 217 के खंड (3) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जाये।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 217 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 217 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 218

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, मसौदा-समिति द्वारा बाद में पुनरीक्षण करने से यह अनुच्छेद आवश्यक नहीं समझा गया। अत: इस अनुच्छेद पर सदन में मत लिया जा सकता है और यदि सदन चाहे तो यह अस्वीकार किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 218 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 218 संविधान से अपमार्जित किया गया।

अनुच्छेद 219

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 219 को लेंगे।

(संशोधन संख्या 2749 पेश नहीं किया गया।)

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 219 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 219 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 220

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूं कि अनुच्छेद 220, 221 और 222 पर साथ-साथ मत लिया जाये, क्योंकि मसौदा-समिति इन्हें आवश्यक नहीं समझती है।

***अध्यक्ष:** मैं इन पर अलग-अलग मत लूंगा।

(संशोधन संख्या 2751 और 2752 पेश नहीं किये गये।)

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 220 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 220 संविधान से अपमार्जित किया गया।

अनुच्छेद 221

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद पर कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 221 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 221 संविधान से अपमार्जित किया गया।

अनुच्छेद 222

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद पर भी कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 222 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 222 संविधान से अपमार्जित किया गया।

अनुच्छेद 223

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद पर कई संशोधन हैं।

(संशोधन संख्या 2754 से 2759 तक पेश नहीं किये गये।)

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 223 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 223 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 224

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं चाहता हूं कि अनुच्छेद 224 और 225 स्थगित रखे जायें।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 224 और 225 स्थगित किये जाते हैं।

अनुच्छेद 226

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं औपचारिक रूप में संशोधन संख्या 2775 को पेश करता हूं।

इसके बाद मैं उस पर एक संशोधन पेश करता हूं।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 2775 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाये:

'कि अनुच्छेद 226 का पुनरांकन अनुच्छेद 226 के खंड (1) के रूप में किया जाये, और

(क) इस प्रकार पुनरांकित उपर्युक्त खंड के अंत में 'while the resolution remains in force' (जब तक वह संकल्प प्रवृत्त है) शब्द प्रविष्ट किये जायें; तथा

(ख) इस प्रकार पुनरांकित उपुर्यक्त अनुच्छेद 226 के खंड (1) के पश्चात् निम्न खंड प्रविष्ट किये जायें:

(a) at the end of the said clause as so renumbered the words 'while the resolution remains in force' be added; and

(b) after clause (1) of article 226, as so renumbered, the following clauses be added:

'(2) A resolution passed under clause (1) of this article shall remain in force for such period not exceeding one year as may be specified therein :

Provided that if and so often as a resolution approving the continuance in force of any such resolution is passed in the manner provided in clause (1) of this article, such resolution shall continue in force for a further period of one year from the date on which under this clause it would otherwise have ceased to be in force.

(3) A law made by Parliament which Parliament would not but for the passing of a resolution under clause (1) of this article have been competent to make shall to the extent of the incompetency cease to have effect on the expiration of a period of six months after the resolution has ceased to be in force, except as respects things done or omitted to be done before the expiration of the said period.' ''

[(2) खंड (1) के अधीन पारित संकल्प एक वर्ष से अनधिक ऐसी कालावधि के लिये प्रवृत्त रहेगा जैसा कि उसमें उल्लिखित हो:

परन्तु यदि और जितनी बार, किसी ऐसे संकल्प को प्रवृत्त बनाये रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प खंड (1) में उपबन्धित रीति से पारित हो जाये तो ऐसा संकल्प उस तारीख से आगे, जिसको कि वह इस खंड के अधीन अन्यथा प्रवृत्त न रहता, एक वर्ष की और कालावधि तक प्रवृत्त रहेगा।

(3) संसद द्वारा निर्मित कोई विधि, जिसे संसद खंड (1) के अधीन संकल्प के पारण के अभाव में बनाने में सक्षम न होती, संकल्प के प्रवृत्त न रहने से छः मास की कालावधि की समाप्ति पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के अतिरिक्त प्रभावी न होगी, जो उक्त कालावधि की समाप्ति से पूर्व की गई या की जाने से छोड़ दी गई है।]

(संशोधन संख्या 2776 पेश नहीं किया गया।)

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, यह बड़े झगड़े का अनुच्छेद है और डा. अम्बेडकर ने अपने संशोधन से झगड़े की कुछ मात्रा को कम करने का प्रयत्न किया है परन्तु मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि इस संशोधन ने इस अनुच्छेद को उस प्रयोजन के लिये लगभग व्यर्थ सा कर दिया है जिसके लिये यह रखा गया था। इस अनुच्छेद का यह उद्देश्य था कि यदि प्रान्तों की एक बड़ी संख्या ने यह चाहा कि कुछ विषयों में उनमें परस्पर मेल हो और चूंकि उन्हें अकेले उन प्रान्तों में मेल के लिये कोई ऐसी विधि बनाने का अधिकार नहीं है, वे राज्य-परिषद् में अपने प्रतिनिधियों से दो-तिहाई के बहुमत से संसद को इस विषय पर विधि बनाने की शक्ति देने वाला संकल्प पारित

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

करने के लिये कहें। उदाहरण के रूप में हम यह मान लें कि चार या पांच प्रान्तों में खाद्य पदार्थ के सम्बन्ध में आपात है। यदि इन प्रान्तों में खाद्य-नियंत्रण अथवा वितरण सम्बन्धी कोई विधि नहीं है, तो आपात का सामना करने के लिये किसी एक प्रान्त द्वारा कोई विधि पारित करने से कोई लाभ न होगा, क्योंकि खाद्य तो प्रान्तीय विषय है और इस कारण केन्द्र को उसके बारे में विधान बनाने का अधिकार नहीं होगा। अत: यह अनुच्छेद केवल उत्तर सदन को संसद से कोई ऐसी विधि पारित करने हेतु निवेदन करने के लिये दो तिहाई बहुमत से संकल्प पारित करने की शक्ति देता है, जो आपात को दूर कर सके और इन चार या पांच प्रान्तों की सहायता कर सके।

श्रीमान्, मूल रूप में इस अनुच्छेद से समय की बिना किसी परिसीमा के यह शक्ति देने का अभिप्राय था और उसका यह अर्थ हुआ कि जब तक आपात रहे, तब तक वह रह सकता था। परन्तु कुछ लोगों ने इस अनुच्छेद में प्रान्तीय स्वायत्त शासन की शक्तियों का परिसीमन देखा और इस कारण उन्होंने पुराने अनुच्छेद का विरोध किया और डा. अम्बेडकर का यह संशोधन उस विचार बिन्दु की पूर्ति के लिये है। कालावधि को कम करके एक वर्ष तक की रखने से मैं नहीं समझ पाता हूं कि आपात का वास्तव में किस प्रकार सामना किया जायेगा। अत: प्रत्येक वर्ष राज्य-परिषद् का मत लेना पड़ेगा और यदि परिषद् दूसरी वर्ष के लिये अवधि विस्तार करने के लिये सहमत है तो संसद द्वारा गत वर्ष का उपक्रम किया हुआ विधान लागू रहेगा। मतदान की अनिश्चितता के कारण मैं नहीं समझ पाता हूं कि कोई बड़ी योजना का उपक्रम किया जा सके। अत: मैं समझता हूं कि यह कहने से कि प्रतिवर्ष एक नया संकल्प पारित किया जाये, यह कहना बहुत अच्छा होगा कि कम से कम सर्वप्रथम तो राज्य-परिषद् का संकल्प तीन वर्ष के लिये शक्ति प्रदान करेगा और उसके बाद उसका विस्तार एक-एक वर्ष के लिये हो सकेगा जब तक कि आपात समाप्त न हो जाये। अत: मैं समझता हूं कि यदि उस प्रयोजन की पूर्ति करना है जिसके लिये यह अनुच्छेद रखा गया है तो एक वर्ष की अवधि को सर्वप्रथम तीन वर्ष की अवधि में परिवर्तित किया जाये और फिर बाद में एक वर्ष के लिये। यह बहुत कुछ सम्भव है कि दूसरी वर्ष एक तिहाई सदस्यों का नव निर्वाचन हो जाये और वे उस विधि को पारित न करें और ऐसा हो सकता है कि प्रथम वर्ष खर्च किया हुआ धन व्यर्थ जाये। एक वर्ष की अवधि नियत करने से बड़ी हानि हो सकती है। अत: मैं डाक्टर अम्बेडकर से निवेदन करूंगा कि वे स्वयं यह कह कर कि प्रथम तीन वर्ष जो, यदि अपेक्षित हो तो एक-एक वर्ष के लिये और बढ़ाया जा सकेगा, इस संशोधन में संशोधन करेंगे। अमरीका में, वास्तव में जहां कि संसद को उन विषयों पर विधान बनाने का कोई अधिकार नहीं है जो राज्यों के क्षेत्राधिकार में हैं, वहां यह अनुभव किया गया है कि ऐसे आपात का सामना करने में बड़ी कठिनाई होती है और वे अपनी योजनाओं को, जिनके लिये राज्यों की सहमति अपेक्षित है, उन योजनाओं में वित्तीय सहायता देने के प्रलोभन द्वारा सफल बना सकते हैं। यह अनुच्छेद इस कठिनाई को दूर करने के लिये रखा गया था। अत: मैं सदन से निवेदन करता हूं कि इतनी देर के बाद भी इस अवधि को तीन वर्ष की अवधि के रूप में नियत किया जाये, क्योंकि जिस रूप में यह अनुच्छेद वर्तमान है उस रूप में यह निरर्थक है।

***श्री एच.वी. पातस्कर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है और मैं समझता हूं कि जहां तक राज्य की शक्तियों के प्रश्न का सम्बन्ध है वहां तक इस पर अधिक ध्यान देना चाहिये।

जिन उपबन्धों को हम पारित कर चुके हैं उनके निर्देश से हमारे पास तीन सूचियां— (1) संघ-सूची जिसमें वे विषय हैं जिनको अनियमित करने के लिये विधि पारित करने का क्षेत्राधिकार पूर्णतया संसद को है (2) समवर्ती सूची जिसके लिये राज्य तथा संसद दोनों विधान बना सकते हैं और इस संबंध में संसद का विधान राज्य द्वारा पारित विधान के समक्ष अधिक माना जायेगा (3) राज्य-सूची अर्थात् वह जिसके लिये विधान पारित का क्षेत्राधिकार केवल राज्यों को होगा। मैं इस बात की ओर भी सदस्यों का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा कि इन सूचियों में से किसी सूची के क्षेत्र से जो बाहर रह जाते हैं वे विषय संघ-संसद को दिये जा रहे अर्थात् समस्त अवशिष्ट शक्तियां संघ-संसद को हैं। अत: राज्यों के लिये जो शक्तियां रह जायेंगी वे हैं, जिनका उन सूची में समावेश किया जायेगा, जो बाद में राज्य सूची के नाम से विनिश्चित की जायेंगी।

देश की परिस्थिति पर ध्यान देते हुए सदन को यह अधिकार होगा कि वह राज्य-सूची में समाविष्ट किये जाने वाले विषयों की संख्या कम कर दे। विभिन्न कारणों वश ऐसा करना पड़ेगा। खाद्य की विकट समस्या है जो केवल हमें ही नहीं वरन संसार के अनेक अन्य देशों को भी भयभीत किये हुये है। यह आवश्यक हो सकता है कि इस विषय को संघ-संसद अपने हाथ में ले ले। इसी प्रकार ऐसे और भी विषय हो सकते हैं जो देश की शान्ति और सुरक्षा के लिये आवश्यक हों। और यह आवश्यक हो सकता है कि कुछ विषय जो प्रारंभ में राज्य-सूची में समाविष्ट थे, उनको संघ सूची में समाविष्ट करना पड़े। इन परिस्थितियों के अधीन यह गंभीर विचार का विषय है कि क्या हम इस समय इस अनुच्छेद 226 का अधिनियम बनायें।

यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि ऐसी अवस्थाएं हैं जिनमें राज्य केवल उस क्षेत्र के लिये विधान बना सकता है जो उसके क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत है और ऐसी समस्या उत्पन्न हो सकती है जिसके लिये यह अपेक्षित हो कि विधान ऐसा होना चाहिये, जो एक राज्य से अधिक के लिये प्रयोज्य हो तो इस दशा में वास्तव में यह आवश्यक हो जाता है कि संघ-संसद उस विधान को पारित करे क्योंकि राज्य को ऐसे विधान पारित करने की कोई शक्ति नहीं है। पर इसके लिये हम अनुच्छेद 229 में उपबंध बना रहे हैं और यदि राज्य सभा और परिषद, यदि परिषद् है तो, दोनों इस प्रकार का विनिश्चय करती हैं तो संघ-संसद को राज्य के विषय के सम्बन्ध में भी विधान बनाने की शक्ति दी जायेगी। मेरे विचार से यह भी आवश्यक है पर इस बात पर गंभीरतापूर्वक विचार करना है कि क्या अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति आवश्यक है और उसकी क्या-क्या उलझनें हैं। अनुच्छेद 226 में यह कहा गया है: ''इस अध्याय के पूर्वगामी उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी यदि राज्य परिषद् न उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की दो तिहाई से अनन्य संख्या द्वारा समर्थित संकल्प द्वारा घोषित किया है कि राष्ट्रीय हित में यह आवश्यक तथा इष्टकर है कि संसद.....।'' जिस मुख्य आधार पर इस शक्ति का

[श्री एच.वी. पातस्कर]

देना प्रस्थापित किया गया है वह यह है कि राष्ट्रीय हित में संसद राज्यों के लिये विधि बनाये। यदि वास्तव में राष्ट्रीय हित का विषय है, तो मैं नहीं समझ पाता हूं राज्य स्वयं विधान पारित क्यों नहीं करेगा अथवा संसद द्वारा विधान बनाये जाने के लिये सम्मति देने के लिये क्यों इच्छुक न होगा। हम यह क्यों सोच लें कि राज्य इस प्रकार के अराष्ट्रीय रुख को अपनायेगा? संविधान में ऐसे अन्य प्रावधान हैं जिनके अधीन राष्ट्रीय हित, आपात इत्यादि के आधार पर संसद हस्तक्षेप कर सकती है। अनुच्छेद 226 में विशेषकर ये शब्द ''राष्ट्रीय हित में संसद विधि बनाये'' कुछ ऐसे हैं जिनसे यह बोध होता है कि केन्द्र के लिये यह अपेक्षित है कि राष्ट्रीय हित के विषय में संसद विधि बनाये जिसको पारित करने के लिये राज्य तैयार नहीं है। थोड़े से विषय जो राज्य द्वारा विधान बनाने के लिये छोड़े गये हैं उनके प्रति मैं समझता हूं कि ऐसी स्थिति उत्पन्न होने की बहुत कम सम्भावना है। मैं समझता हूं कि अनुच्छेद 226 की कोई आवश्यकता नहीं है। हां, जैसा कि मैंने कहा था किसी विशेष परिणाम पर पहुंचने के पूर्व इस पर वाद-विवाद होना चाहिये। मैं यह नहीं कहता हूं कि मैं इसके विपक्ष में हूं, मैं इसे मानने के लिये तैयार हूं क्योंकि कोई व्यक्ति भिन्न परिणाम तक पहुंच सकता है। दूसरे पक्ष के विचारों पर सोचने के बाद मैं केवल यह बता देना चाहता हूं कि किसी भी विचार बिन्दु से यह सुखकर नहीं होगा कि सब पहलुओं पर विचार किये बिना इस अनुच्छेद को पारित होने दिया जाये।

***श्री ओ.वी. अलगेसन** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे इस अनुच्छेद में बड़ी दृष्टता दृष्टिगोचर होती हैं। एक ओर यह कहा जाता है कि यह आगे आने वाले अनुच्छेद 229 का विस्तृत तथा परोक्ष कथन है। यदि यह उतना ही निष्पाप है जितना कि अनुच्छेद 229 तो मेरा विचार यह है कि यह व्यर्थ है। राज्य-सूची के विषयों में राज्य-परिषद् के अभिकरण से केन्द्रीय सरकार द्वारा हस्तक्षेप करने की व्यवस्था इस अनुच्छेद में की गई है। यह कहा जाता है कि रक्षात्मक बात यह है कि राज्य-परिषद् में विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधि बैठेंगे और वे सम्बद्ध राज्य की कदाचित् उपेक्षा न करें और इसकी पुष्टि के लिये खाद्य का चित्र प्रस्तुत किया गया है। खाद्य जैसे विषयों में यदि केन्द्र हस्तक्षेप करता है और राज्यों की सहायता करता है, तो यह सम्बन्ध राज्यों के हित की बात होगी। ऐसी दशाओं में राज्य अवश्य अनुच्छेद 229 में दिये हुए उपबन्धों से लाभ उठायेंगे। उनमें केन्द्र से यह निवेदन करने की सद्भावना होगी कि केन्द्र हस्तक्षेप करे और ऐसे विषयों पर विधान बनाये, जिनको संव्यवहृत करना उनकी शक्ति अथवा सामर्थ्य से परे है। मैं डा. अम्बेडकर के सम्मुख एक सीधा सा प्रश्न रखूंगा। उदाहरणार्थ इस समय हैदराबाद के राज्य और मद्रास प्रेसीडेंसी में कोई परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। इन दोनों राज्यों के कुछ सीमा क्षेत्रों की लोक शान्ति में विघ्न पड़ता है। तो मैं यह पूछना चाहूंगा कि क्या यह समुचित होगा कि ऐसी परिस्थितियों के अधीन केन्द्र हस्तक्षेप करे और सम्बद्ध दोनों राज्यों से विधि और व्यवस्था का कार्य ले ले। श्रीमान्, मुझे विश्वास है कि यदि ऐसी बात होती है तो वह प्रान्तीय स्वायत्त शासन का उपहास होगा। अत: मेरा यह कहना है कि यह अनुच्छेद

यदि अनुच्छेद 229 का विस्तृत कथन मात्र है तो यह व्यर्थ है और यदि इसके पीछे कोई रहस्य है और यदि यह विचार है कि केन्द्र अनुच्छेद 229 में जो कुछ दिया गया है उससे और आगे बढ़े तो यह वास्तव में दुष्टतापूर्ण है और इसको यहां नहीं रखना चाहिये। डा. अम्बेडकर के मूल संशोधन में तीन वर्ष के लिये व्यवस्था की गई है। मैं अपने उन मित्रों से जिनके ये विचार हैं कि यह आवश्यक है कि तीन वर्ष का उपबन्ध रखा जाये यह जानना चाहूंगा कि क्या किसी आपात को आपात कहा जा सकता है, यदि वह तीन वर्ष अथवा इससे अधिक समय के लिये रहे। वह आपात न रहेगा वह तो एक स्थायी रूप हो जायेगा। अत: वर्तमान अनुच्छेद में इस धारा की शक्ति में रूप मद करने का प्रयत्न किया गया है जिसमें प्रांतीय स्वायत्त शासन में हस्तक्षेप करने की दृष्टता के लिये महान शक्ति है। इतने समय के पश्चात् इस स्थिति में भी मैं डा. अम्बेडकर से निवेदन करूंगा कि यदि वे ले सके तो उस अनुच्छेद को वापस ले लें और यह आश्वासन दें कि प्रान्तीय स्वायत्तता में हस्तक्षेप नहीं होगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 226 पर डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन के लिये कुछ व्याख्या नि:संदेह रूप में अपेक्षित हैं। मैंने अपने माननीय मित्र श्री पातस्कर की तथा मित्र श्री अलगेसन की बातें ध्यानपूर्वक सुनी। सदन यह अनुभव करेगा कि डा. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में यह अनुच्छेद उस अनुच्छेद से सर्वथा भिन्न है जो मूल रूप में मसौदा में था और यह अनुच्छेद जिस रूप में मसौदे में मूलत: था, उससे यह आशय था कि वह किसी भी कमी को जो शक्तियों के वितरण में विद्यमान हो उसे पूरी करे। जिन शक्तियों में कि यह आवश्यक था कि अनुच्छेद 229 द्वारा सूचित आदेशिका का पालन किये बिना केन्द्र प्रान्तों की कार्यवाहियों को शीघ्र समान रूप में लाये तथा उन दशाओं को भी ले ले जहां कि कुछ अच्छादन की मात्रा हो। मूलत: जिस रूप में संशोधन था उसमें यह भी लाभ था कि उसके द्वारा उस खास विषय पर शक्ति प्रयोग करने का प्रयत्न किया गया था, जिसको केन्द्र अपनी और राज्य-परिषद् द्वारा पारित संकल्प द्वारा आकर्षित किये हुए था; यह उसका मुख्य दोष था। जब कोई खास कार्यवाही की जाती थी और प्रान्तीय स्वायत्तता के क्षेत्र का अपहरण किया जाता था, कदाचित यह बहुत ही आवश्यक है कि ऐसी कार्यवाही के प्रवृत्त बने रहने के लिये कोई समय-सीमा होनी चाहिये। समवर्त्ती सूची में स्थायी रूप से उस विषय को रख देने से कोई लाभ नहीं। इसमें मुझे सन्देह नहीं है कि विषय के इस पहलू पर ही डा. अम्बेडकर ने अपने पहले संशोधन की सूचना दी थी; अर्थात् उस कार्यवाही के क्षेत्र को परिसीमित करना, जिसको संसद अनुच्छेद 226 में दी हुई रीति के अनुसार विहित प्राधिकरण द्वारा तीन वर्ष के लिये कर सकती थी। उस योजना के अनुसार तीन वर्ष के लिये अवधि को बढ़ाने पर तथा इसके पश्चात् और भी बढ़ाने पर कोई आपत्ति नहीं होगी यदि उस विशिष्ट संकल्प के समाप्त होने तथा उन्हीं आधारों पर नये संकल्प के पेश होने में कुछ समय व्यतीत होने दिया जाता। इस अनुच्छेद की योजना पर मेरे माननीय मित्र श्री पातस्कर तथा उनसे पूर्व वक्ता ने जो आपत्ति उठाई है उनमें मुझे कोई तर्क की शक्ति नहीं दिखाई देती है। मैं उन लोगों में से हूं जो यह विश्वास रखते हैं, दृढ़ विश्वास रखते हैं कि प्रान्तों को कार्य करने के लिये जो कुछ भी क्षेत्र हम सौंपे, हम उनको उस क्षेत्र में पूर्ण भार दे दें—यह उन सैद्धांतिक कारणों के

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

प्रति किसी दृढ़ अनशक्ति के आधार पर नहीं है कि जिस फैडरल प्रणाली को हमने ग्रहण किया है वह पवित्र हो और हमारे यहां कनाडा के समान मिश्रित प्रकार की फैडरल प्रणाली न हो, वरन् केवल इसलिये कि मैं समझता हूं कि प्रान्तीय मंत्रियों के उत्तरदायित्व उन पर स्पष्ट रूप से रखे जायें और उनको ऐसा अवसर न दिया जाये कि वे केन्द्र और प्रान्तों में विभक्त उत्तरदायित्व की आड़ में शरण ले लें। श्रीमान्, इस विशिष्ट विषय पर मेरे दृढ़ विचार हैं और मैं यह समझता हूं कि शक्तियों के बंटवारे के इस समूचे अध्याय पर जिस समय हम विचार करें, उस समय हम सदैव इस खास तथ्य को ध्यान में रखे। यह कोई बात नहीं है कि जो शक्तियां प्रान्तों को दी जाती हैं उनका क्षेत्र अधिक विस्तृत नहीं है। इससे वास्तव में प्रान्तों में सुचारू रूप से कार्यवाही करने में हस्तक्षेप नहीं होता है, जब तक कि प्रान्तों को बांट में दी जाने वाली शक्तियों की योजना के अन्तर्गत केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप नहीं होता। इस दृष्टिकोण से देखने पर मूलत: जिस रूप में अनुच्छेद 226 था, वह वास्तव में आपत्तिजनक था कि इस बात के होते हुए भी कि केन्द्र को उस राज्य-परिषद् से शक्ति मिलती थी, जिसमें अंगभूत राज्यों का पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व है और संसद को शक्ति प्रदान करने वाला अधिनियम दो तिहाई के बहुमत से है, जिसका यह अर्थ था कि राज्य इस बात से सहमत है कि केन्द्र उस प्रान्तीय शक्ति को अपनी ओर आकर्षित करे। मैं यह समझता हूं कि शायद केन्द्र को प्रांतों से अधिक शक्तियां आकर्षित कराने के लिये प्रोत्साहन देने का यह एक किंचित मात्र साधन माना जा सकता है, जिससे कि वास्तविक महत्त्वपूर्ण विषयों पर कार्यवाही की समनुरूपता के प्रयोजनार्थ केन्द्र में शक्तियों के केन्द्रित करने की आदेशिका में यह साधारण विचार कि केन्द्र को अधिक महान् शक्तियां मिले, स्वीकार कर लिया जाये। दूसरे दृष्टिकोण से विचार करने पर अर्थात् आर्थिक उद्देश्य के दृष्टिकोण से, जिसके लिये हम वचनबद्ध हैं—केन्द्र का आर्थिक विषयों में हस्तक्षेप औपचारिक आवश्यकता से अधिक आवश्यक हो जाता है—ये सब बातें मिल कर अवश्य ही राज्यों से छीन कर केन्द्र में अधिक शक्तियां केन्द्रित करने की ओर अग्रसर होंगी और यह भी सत्य है कि आज जिस रूप में अन्य संघ-शासन अथवा अर्ध संघ-शासन व्यवस्थायें विद्यमान हैं जैसे कि संयुक्त राष्ट्र अमरीका, आस्ट्रेलिया और कनाडा में जैसे जैसे समय बीतता जाता है, वैसे वैसे चाहे सांवैधानिक रूप से अथवा न्यायपालिका की उद्घोषणओं के आधार पर अथवा काल की आवश्यकता के कारण हम देखते हैं कि केन्द्र अपनी ओर अधिक से अधिक शक्ति आकर्षण करने की ओर शीघ्रता से बढ़ रहा है। यहां तक कि युद्धोत्तर कालीन उपक्रमों की पूर्ति हेतु फेडरल मंत्रिमंडल द्वारा केन्द्र के लिये अधिक शक्तियों की मांग के सम्बन्ध में आस्ट्रेलिया के लोगों का जनमत में विरोध मत पारित होने से हमें केन्द्र के शक्ति आकर्षण करने के आन्दोलन में अवरोध दिखाई दिया है। आस्ट्रेलिया में जो कुछ हुआ उससे हमें सबक सीखना चाहिये, जब कि जनमत के पक्ष में केवल एक ही पक्ष नहीं वरन दोनों पक्ष थे। दोनों पक्ष केन्द्र के लये अधिक शक्ति चाहते थे परन्तु दुर्भाग्य से जनमत ने उसे अस्वीकार किया। अत: मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि शक्ति वितरण की इस योजना में जिसको परिवर्द्धन इसके बाद के अध्याय मे आने वाली वित्तीय शक्तियों से किया जायेगा और अन्त में अनुसूची 3 के तीनों भागों की योजना द्वारा किया जायेगा, हमको प्रान्तों के लिये अथवा जिनको अब राज्य कहा जाता है उनके लिये कुछ शक्तियां पूर्ण रूप में छोड़

देनी चाहिये। उचित समय आने पर मैं यह सुझाव रखूंगा कि मुख्य कारणवश जहां विभिन्न एककों की कार्यवाही में समानता लाने की शक्तियां केन्द्र के लिये आवश्यक हों वहां यह अच्छा होगा कि उस विषय को राज्य सूची में रखने और इस क्षेत्र में अनेक अन्य प्रकारों से हस्तक्षेप करने की सुविधा देने की अपेक्षा समवर्ती सूची में रखा जाये। केवल इसी प्रकार नहीं जिसका विचार इस अनुच्छेद में रखा गया है वरन् और भी प्रकार हैं और समय आने पर उन प्रकारों पर विचार व्यक्त करने और उनके प्रयोग के विरुद्ध रक्षा कवचों का सुझाव देने के लिये काफी वक्त मिलेगा। अत: यद्यपि मैं भी यह मानता हूं, कि मूल रूप में यह अनुच्छेद आपत्तिजनक था और यदि मैं पूर्व वक्ता का शब्द प्रयोग में ला सकता हूं, तो वह दुष्टतापूर्ण भी था और ऐसा था जो राज्य के पास उत्तरदायित्व जितनी पूर्ण मात्रा में रहना चाहिये था उसे वह राज्य से अलग करने वाला था, पर मैं समझता हूं कि अनुच्छेद 226 के विरुद्ध इस आपत्ति के सार का यह संशोधन अपहरण करता है। हां, मैं अपने मित्र श्री पातस्कर के तर्क को समझ सकता हूं, जो कदाचित् अनुच्छेद 226 के उपबन्ध की आवश्यकता को तो समझ सकते हैं, परन्तु संशोधन में जिस उपबन्ध पर विचार है उसकी आवश्यकता की नहीं समझ पाते हैं; विशेषकर अनुवर्ती अनुच्छेद 229 के होने के कारण। श्रीमान्, शायद श्री पातस्कर ने अनुच्छेद 229 के क्षेत्र को नहीं समझा है जो कि एक ऐसी ही धारा का पुनरूप है; अर्थात् भारतीय सरकार के अधिनियम की धारा 103 का। और चूंकि अनुच्छेद 226 और 229 में तुलना की गई है, अत: इस दशा में भी यह मालूम करना ठीक है कि भारतीय सरकार के अधिनियम की ऐसी धारा का कितनी बार उपयोग किया गया था। मुझे याद आता है कि कभी सन् 1939 में केन्द्र को औषधि नियंत्रण के सम्बन्ध में विधान का उपक्रम करने के लिये शक्ति प्रदान करने के संकल्प विभिन्न प्रान्तों में पेश किये गये थे। मुझे यह भी याद है कि दो साल पूर्व जब कि केन्द्र ने दामोदर घाटी निगम के लिये अधिनियम बनाया था बिहार और बंगाल की दोनों सरकारों को धारा 103 के अधीन दी हुई शक्तियों के अन्तर्गत विधान पारित करना पड़ा था अत: अनुच्छेद 229 उन विषयों में कार्यवाही करने की व्यवस्था करता है जिनमें प्रान्तों की मुख्य अभिरुचि है और कभी-कभी ऐसा हो सकता है कि केवल दो प्रान्तों की ही अभिरुचि हो और इसके लिये शक्तिदायक उपबन्ध विहित किया जाता है, जिससे कि केन्द्र द्वारा समनरूपता का विधान बनाया जा सके और यह भी स्मरण रखना है कि यह आदेशिका बहुत समय लेती है। प्रान्त से पेश कराने के लिये आपको कार्यपालिका के सहयोग की आवश्यकता है, आपको विधान मंडल के सदस्यों के सहयोग की आवश्यकता है, और इसमें बहुत समय लग जाता है, और यदि ऐसा हो जाये कि केवल उस आवश्यक विषय के सम्बन्ध में अधिक शक्तियां चाहे, जिसमें कि आपात की धाराओं के उपबंध अन्तर्ग्रस्त नहीं किये जा सकते या नहीं करने चाहिये तो वास्तव में केन्द्र के कार्यवाही करने के लिये कोई रीति होनी चाहिये। यह हो सकता है कि कोई वकील यहां यह कहे कि चूंकि अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र को है; ओन्टोरियो के महान्यायवादी बनाम कनाडा की मद्य-निषेध संस्था के अभियोग में कनाडा के निर्णय के उदाहरण का उपयोग किया जा सकता है क्योंकि कनाडा के संविधान के समान इस संविधान में अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र पर निर्भर की गई है। परन्तु फिर भी एक कठिनाई है जैसा कि फैडरल शासन व्यवस्था के माने हुए विद्वान प्रो. के.सी. वेयर ने बताया है कि शक्तियों को बिल्कुल ठीक-ठीक बांटने का विचार, जिसका उपक्रम भारतीय सरकार के अधिनियम

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

की अनुसूची 7 में किया गया है और जिस अधिनियम का हमने पूरा-पूरा अनुसरण किया है और संविधान के मसौदे की अनुसूची 7 में हमने उसमें और भी सुधार किये हैं, अब अवशिष्ट शक्तियों के निर्वचन का यह अर्थ लगाने के लाभ की गुंजाइश न देगा कि केन्द्र उस विषय में हस्तक्षेप कर सकता है, जो पूर्णतया राज्य के क्षेत्र के अन्तर्गत है और जिसमें राज्य का सिवाय लोकहित के कोई सम्बन्ध नहीं है। अत: मैं तो यह विश्वास करता हूं कि डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन द्वारा संशोधित रूप में अनुच्छेद 226 में कुछ उपयोगिता है, जो मूल अनुच्छेद में अथवा डा. अम्बेडकर के मूल संशोधन द्वारा परिवर्तित रूप में जितनी भी तेजी है उस सब को दूर कर देता है। यदि वर्तमान रूप में अनुच्छेद स्वीकार किया जाता है तो स्थिति यह होगी कि विषय को संकल्प के रूप में प्रति वर्ष राज्य-परिषद् के समक्ष लाना पड़ेगा जिससे कि सांसदिक अधिनियम को संकल्प के रूप में प्राधिकार के अधीन जीवित रखा जा सके और हमने कोई समय-सीमा रखी नहीं है। सारी स्थिति का तीन वर्ष अथवा 6 वर्ष के अन्त में समाप्त होने का कोई प्रश्न नहीं है। यदि आपात बना रहता है तो कोई भी इस बात को मान सकता है कि राज्य-परिषद् इस संकल्प की आड़ में अधिनियमित विधान को जीवित रखने की आवश्यकता का अनुभव करने में यथेष्ट रूप से सतर्क रहेगी और प्रति वर्ष नये संकल्प द्वारा ऐसे अधिनियम के जीवन को बढ़ाती रहेगी। इस सदन के दूसरे पक्ष का हमें अनुभव है कि कुछ अधिनियम जिनमें आर्थिक उलझनें थीं, सदन के संकल्प द्वारा प्रतिवर्ष विस्तृत कर दिये जाते हैं और मैं नहीं समझता हूं कि प्रश्न पूछने के अतिरिक्त सरकार को इन शक्तियों के देने पर कोई कटु विरोध हुआ हो, यदि सरकार ने इन शक्तियों को रखने की आवश्यकता का सदन को विश्वास करा दिया हो। साथ ही साथ राज्य के लिये कार्यवाही में कुछ स्वतंत्रता का वह परिरक्षण करती है यदि एक वर्ष के पश्चात् कदाचित् एकाध मत के अन्तर से अथवा किसी ऐसे ही प्रकार से केन्द्र किसी ऐसे विधान के उपक्रम करने में सफल हो जाता है, जो स्पष्ट तथा प्रकट रूप से प्रान्तीय स्वायत्तता के क्षेत्र में हस्तक्षेप करता है, तो राज्य-परिषद् के अपने प्रतिनिधियों से प्रान्त अथवा राज्य को यह कहने की काफी गुंजाइश है कि जब वह आगामी वर्ष पुनर्नवीकरण के लिये फिर से प्रस्तुत हो, तो वह उसका पुनर्नवीकरण न करें। और यदि कोई दृष्टता होती भी है तो वह केवल एक वर्ष के लिये होगी। जब शक्तियों को इतना निर्बन्धित किया जाता है और एक वर्ष के लिये प्रदान किया जाता है और प्रतिवर्ष राज्य-परिषद् के संकल्प द्वारा उसका पुनर्नवीकरण करना पड़ता है तो ऐसा नहीं हो सकता कि संसद अथवा केन्द्रीय कार्यपालिका आपात कार्यवाही की आवश्यकता के प्रति पूर्ण संतोष प्राप्त किये अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत किसी कार्यवाही को करे और इसके साथ-साथ राज्य के विधान-मंडल के सदस्यों तथा राज्य की कार्यपालक सरकार के दिल दुखने की व्यवस्था करे। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि डा. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 194 द्वारा संशोधित प्रकार के उपबन्ध के रखने में लाभ ही अधिकतर प्रतीत होता है। यदि कोई दुष्टता है भी तो वह बहुत सीमित अवधि के लिये निर्बन्धित हो जाती है, और यही बात कि वह बहुत अल्प समय के लिये सीमित है, केन्द्र को इसे अपनी शक्तियों के बढ़ाने के साधन के रूप में प्रयोग करने के लिये कोई प्रलोभन नहीं मिलता है। और यदि इसका प्रयोग किया भी जाता है

तो मान्य तथा निश्चित रूप से उपयोगी प्रयोजन के लिये किया जायेगा, जिसके प्रति अंगभूत राज्यों को सम्भवत: कोई आपत्ति नहीं होगी। श्रीमान्, यद्यपि मैं एक ऐसे विषय पर सभा का समय ले रहा था जिस पर इस समय अधिक वाद-विवाद के लिये उत्तेजना नहीं प्रतीत होती थी, पर मैंने समझा कि ऐसे भ्रमात्मक विचारों को रोकने के लिये यह आवश्यक है, जो इस रूप में राज्यों में उत्पन्न हो जायें कि इस संविधान के मसौदे की ऐसी रचना की गई है कि यह केन्द्र की ओर समस्त शक्तियों के आकर्षण कराने में सहायता देता है और यह कि प्रान्तीय स्वायत्तता के लिये जो क्षेत्र छोड़ा गया है, वह बहुत निर्बन्धित है। इस विचार का विरोध करने के लिये ही इस विशिष्ट अनुच्छेद पर सावधानीपूर्वक विचार किया गया है, उसकी ऊंच-नीच पर पूर्ण विचार कर लिया गया है और यह एक ऐसा संशोधन पुरस्थापित किया जा रहा है, जो प्रान्तीय स्वायत्तता में न्यूनतम हस्तक्षेप करने की व्यवस्था करता है और वह भी केवल उन दशाओं में, जबकि आपातकाल हो तथा किसी दृष्टता के लिये रक्षाकवच स्वयं इस संशोधन के उपबन्धों में है। मैं आशा करता हूं कि यह सदन डा. अम्बेडकर के संशोधन को स्वीकार करेगा और इस देश के लोग इस सदन में हमारी सद्भावनाओं के प्रति विश्वास करेंगे, जिनका उद्देश्य यह है कि यथासंभव और उस सीमा तक जहां तक हमने इन शक्तियों को बिना किसी अनुचित हस्तक्षेप के अक्षुण्ण रखने के लिये प्रान्तीय स्वायत्तता प्रदान की है, प्रान्तीय स्वायत्तता का परिरक्षण किया जाये। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, जिस रूप में यह अनुच्छेद है, उसी रूप में दो या तीन कारणों के आधार पर मैं इसका समर्थन करने के लिये खड़ा होता हूं। मैं इस अनुच्छेद को ऐसा नहीं समझता हूं कि यह किसी आपात काल के लिये बनाया गया है उस प्रयोजन के लिये संविधान में आपात के लिये अन्य उपबन्ध हैं। यह स्पष्ट है कि जब कोई विषय राष्ट्रीय महत्त्व के अनुपात को ग्रहण कर लेता है, तो केन्द्रीय सरकार को हस्तक्षेप करना चाहिये। कोई प्रान्तीय विषय जबकि राष्ट्रीय महत्त्व के अनुपात को ग्रहण कर लेता है तो वह केन्द्रीय विषय बन जाता है। जब हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था उन्नति की प्रारम्भिक दशा में है, उस समय हम प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय विषयों में इतना कड़ा तथा पूर्ण पृथकता का भेद-विभेद नहीं कर सकते हैं सब विषय परस्पर मिले जुले रहने चाहिये। मसौदा-समिति के सदस्यों के चाहे जो कुछ विचार रहे हों, पर मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद का उपयोग सांवैधानिक संशोधनों के प्रयोजनार्थ किया जाये।

केन्द्र के लोग जब यह समझें कि किसी विषय को प्रान्तीय सूची में रखना अब आगे उचित तथा ठीक नहीं है, तो वे सांवैधानिक संशोधन की कठिन कार्यप्रणाली का पालन किये बिना उस विषय को केन्द्रीय विषय बना सकते हैं। यह कार्यप्रणाली निर्धारित है कि राज्य-परिषद् दो तिहाई बहुमत से उस विषय के प्रशासन को अपने हाथों में लेने के लिये सरकार से सिफारिश कर सकती है। मैं नहीं समझता हूं कि यह कार्यप्रणाली ठीक है। मैं समझता हूं कि इस बात को विनिश्चित करने का कार्य केन्द्र के नेताओं पर छोड़ना चाहिये न कि राज्य-परिषद् के सदस्यों के हाथों में। इन विषयों पर निस्पृह विचार करने के लिये वे अच्छी स्थिति में हैं। प्रान्तीय राजधानी और दिल्ली में जमीन आसमान का

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

फर्क है। दिल्ली में लोग यह जान सकते हैं कि आया किसी विषय में राष्ट्रीय महत्त्व का अनुपात ग्रहण किया है अथवा नहीं। प्रान्तों में रहने वाले लोग प्रान्तीय समस्याओं में उलझे रहते हैं, उनका दृष्टिकोण सीमित तथा संकुचित होता है। अत: राज्य-परिषद् में बैठने वाले प्रान्तीय विधान मंडल के प्रतिनिधियों पर ऐसे संकल्प का पेश करना छोड़ देना वास्तव में केन्द्र के उस हित का रद्द करना है, जो उस रूप में प्राप्त किया जा सकता है, जबकि इस प्रकार के संकल्प को पेश करने की शक्ति लोक सभा में निहित की जाये।

मैं समझता हूं कि इस संशोधन में जो कालावधि विनिहित की गई है अर्थात् यह कि ऐसा कदम केवल एक वर्ष के लिये उठाया जा सकता है वह समुचित नहीं है। कोई विषय जिसने राष्ट्रीय महत्त्व के अनुसार अनुपात को ग्रहण कर लिया है वह एक वर्ष के पश्चात् फिर कैसे प्रान्तीय विषय हो सकता है? आज वह राष्ट्रीय महत्त्व का विषय है और कल वह प्रान्तीय महत्त्व का विषय हो जाता है। मैं समझता हूं कि लोग जो कुछ कर रहे हैं उसके बारे में उनको कोई ज्ञान नहीं है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि उन्नतिशील अर्थव्यवस्था में बहुत से विषय जो प्रान्तीय सूची में रखे गये हैं केन्द्रीय हो जायेंगे। केन्द्रीय सरकार को विफल करने तथा उसके मार्ग में रोड़े अटकाने से कोई लाभ नहीं है। विकेन्द्रीयकरण की वृत्तियों पर हमें अधिक जोर नहीं देना चाहिये।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, कल मसौदे तथा डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन, दोनों का विरोध करने का मेरा विचार है। हां, मैं यह बात मानता हूं कि डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किया गया संशोधन मूल प्रस्थापना के जोर को कुछ कम कर देता है पर मेरी सम्मति में वह अब भी आपत्तिजनक है।

मेरी पहली आपत्ति यह है कि केवल एक सदन को अर्थात् उत्तर सदन को इस संविधान में संशोधन करने देना, जिसकी अपनी निराली पवित्रता है, ठीक नहीं है। संविधान में कुछ निश्चित बहुमत से संशोधन करने के लिये अनुच्छेद 304 है जिसमें विशिष्ट उपबन्ध निर्धारित किये गये हैं हां, यह सत्य है कि कुछ लचीलापन रखना वांछनीय है। अत: यदि संकल्प का जारी रखना सम्बद्ध राज्य के विधानमंडलों के मत द्वारा प्राप्त कर लिया गया होता, तो मैं ध्यान नहीं देता। अन्य प्रसंग में प्रयुक्त हुई पदावली को उधार लेकर जिस रूप में वह है उस पर मैं यह कह सकता हूं कि यदि संकल्प वास्तव में राज्य के विधान मंडल के मत को प्रतिबिम्बित नहीं करता है तो वह दृष्टता पूर्ण हैं यदि उसके द्वारा राज्य के विधान मंडलों का मत प्रतिबिम्बित हुआ तब तो विभिन्न राज्य के विधान मंडलों से उसे पारित कराने में कोई कठिनाई नहीं थी। दूसरी ओर यदि उसने उनके मतों को प्रतिबिम्बित नहीं किया तब तो वास्तव में हम उन लोगों की इच्छाओं के विरुद्ध जा रहे हैं जो इस संविधान के अनुसार इन विषयों के प्रति उत्तरदायी हैं। मैं यह स्वीकार करता हूं कि ऐसा कोई समय आ सकता है जब केन्द्र के लिये ऐसी शक्ति अपेक्षित हो। तो फिर वैसे निश्चित आपात के लिये व्यवस्था करिये। परन्तु किसी आपात की अनुपस्थिति में इस प्रकार के संकल्प द्वारा संविधान का संशोधन करना ठीक नहीं है। राज्य-परिषद् का संकल्प एक वर्ष तक के लिये रहता है। इस निश्चित शर्त्त पर उसका पुनर्नवीकरण क्यों नहीं करते कि

उस कालावधि के अवसान के पूर्व राज्य के विधान मंडल का बहुमत उस संकल्प को दो या तीन वर्ष के लिये जारी रखने के लिये निवेदन करने का संकल्प पारित करे? उसके पश्चात् यदि इस संशोधन को जारी रखना है तो उसको अनुच्छेद 304 में निर्धारित सामान्य रीति के अनुसार किया जाये। संसद के तथा राज्य के विधानमंडलों के इस विषय में बिना कुछ कहे केवल उत्तर सदन को ऐसा करने की आज्ञा देने पर इन मूल आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए मैं सुझाव रखता हूं कि यह बात विचारणीय है कि क्या इस अनुच्छेद को इस रूप में रखा जाये।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं समझता हूं कि मूल अनुच्छेद की शब्दावली संशोधन की शब्दावली से कहीं अधिक उत्तम तथा अधिक उपयोगी थी। संशोधन अर्थ अथवा उद्देश्य में कोई सारभूत परिवर्तन नहीं करता है, जिस प्रयोजन के लिये हम व्यवस्था कर रहे हैं उसके लिये मूल अनुच्छेद यथेष्ट रूप में पर्याप्त था। देश में तथा इस सदन में भी यह प्रवृति फैली हुई है और लोग अब भी यह समझते हैं कि प्रांत स्वायत्तता का उपयोग करेंगे और राज्य स्वायत्तशासी राज्य अथवा कुछ ऐसे ही प्रकार के होंगे। विगत कुछ काल से वे इस भावना का आनन्द उठाते रहे हैं। यद्यपि अब समस्त देश स्वायत्तशासी हो गया है, वे इस अखिल भारतीय स्वायत्तता तथा अपनी सत्ता को इस अखिल भारतीय स्वायत्तता में विलीन कर देने के आंनद की लहर को अभी स्पर्श नहीं कर रहे हैं। अत: कुछ शक्तियों को अपनाये रहने की एक प्रकार की कट्टर भावना वर्तमान है, मानो कि प्रान्त अधिक अच्छी कार्यवाही कर सकते हैं।

राज्य शरीर के विभिन्न अंगों के समान है। प्रत्येक अंग पूर्ण रूप से पृथक नहीं हो सकता है तथा स्वायत्तशासी नहीं बन सकता है; वे सबके सब परस्पर मिल कर एक हैं। जिस रूप में अब तक हम अपने संविधान का निर्माण कर रहे हैं उससे भी यह सिद्ध होता है कि हम अपने राज्य को एक शरीर के समान बनाने के विचार से सहमत है और इस शरीर के अंगों के रूप में इन विभिन्न प्रान्तों तथा राज्यों का निर्माण करने से सहमत हैं। यही बात कि जब भी जिस किसी प्रान्त के लिये केन्द्र से विधि अधिनियमित कराना आवश्यक हो, तब उस प्रांत के लिये संसद विधि बनायेगी, सिद्ध करती है कि इस शैली में अपवाद तभी किया जायेगा जब कोई आवश्यकता हो और वह भी तब जब कि राज्य-परिषद् स्वयं इसके पक्ष में दो तिहाई बहुमत से विनिश्चित करे। मान लीजिये, किसी प्रान्त में एक बहुत ही संकटास्पद अथवा घोर वित्तीय संकट है। मान लीजिये, संकल्प में तत्सम्बन्धी विषय के लिये छ: माह के लिये विधि बनाने की संसद से प्रार्थना की जाती है। डा. अम्बेडकर के संशोधन के अनुसार छ: माह के बाद विधि प्रवर्त्तन में न रहेगी। अत: छ: माह के बाद राज्य-परिषद् को फिर बैठक करनी पड़ेगी और अवधि को विस्तृत करना होगा, जिससे कि संसद विधि का विस्तार कर सके। यह कष्टदायक रीति है।

हानि क्या है, हम इस धारणा के प्रति सन्देह क्यों करें? चाहे छ: माह अथवा एक वर्ष की कालावधि का बिल्कुल ही उल्लेख न हो, कोई निकाय जो विधि अधिनियमित कर सकता है वह उसे रद्द भी कर सकता है। विशेषकर जब कि इस बात में विशेष सावधानी की जाती है कि प्रजा के अधिकारों का अपहरण न हो, तो फिर यह सोचने

[श्री महावीर त्यागी]

के लिये कोई कारण नहीं है कि हस्तक्षेप करने का अवसर आयेगा। यदि कोई पड़ोसी राज्य यह समझता है कि उससे मिले हुए राज्य की परिस्थिति उसके प्रशासन पर विपरीत प्रभाव डाल रही है, तो उसे केन्द्र से ऐसे विधान द्वारा, जो समस्त भारत की कुशल क्षेत्र की वृद्धि करे, हस्तक्षेप करने के लिये कहना चाहिये। मैं निवेदन करता हूं कि डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन की अपेक्षा मूल खंड अच्छा प्रतीत होता है। डा. अम्बेडकर का संशोधन अनुच्छेद के अर्थ अथवा संविधान सभा के उद्देश्य में सुधार नहीं करता है। यदि अवधि प्रथम 6 माह और फिर आगामी 6 माह के लिये है, तो वह अनावश्यक रूप से अधिक खर्च कराने वाली होगी और कार्यवाही में विलम्ब करेगी।

श्रीमान्, कुछ बड़े-बड़े प्रान्तों में जिनकी वित्तीय स्थिति अच्छी है यह भावना है कि उन्हें पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त हो तथा केन्द्र द्वारा कोई हस्तक्षेप न हो। कुछ ऐसे प्रान्त हैं जिनमें किसी एक विशेष वर्ग के लोगों का बहुमत है। वे केन्द्र से स्वतंत्र होना चाहते हैं। यह वही मुस्लिम लीग कालीन पुरानी विचारधारा है। कोई विशिष्ट सम्प्रदाय जिसका किसी प्रान्त में बहुमत था, पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त करना चाहता था जिससे कि कोई उसके कार्यों में हस्तक्षेप न कर सके, चाहे वह हस्तक्षेप समस्त भारत के हित में हो। यही पुरानी प्रवृत्ति थी। मैं उनकी आलोचना नहीं करना चाहता हूं। परन्तु यह सत्य है कि कुछ प्रान्त, जिनके हाथ में काफी राजस्व है, केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप का विरोध करते हैं। चाहे वह समस्त भारत के हित के लिये आवश्यक ही क्यों न हो। रूस में भी केन्द्र को हस्तक्षेप करने की ऐसी शक्तियां हैं, यद्यपि गांवों को न्याय सम्बन्धी विषयों तक में भी स्वायतशासी शक्तियां हैं। परन्तु फिर भी इन शक्तियों के प्रयोग की स्वीकृति देने की पूरी शक्ति केन्द्रीय सरकार पर निर्भर है। सर्वोच्च नीति का निदेशन केन्द्र में निहित है। हमारा संघ तभी शक्तिशाली हो सकता है जबकि केन्द्र को समस्त भारत में समान रूप से प्रयुक्त होने वाली विधि बनाने की पूर्ण शक्ति हो। इन शब्दों में मैं मूल अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***श्री बी.एस. सर्वटे** (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि जिस रूप में अनुच्छेद है वह प्रांतों की शक्तियों का अपहरण करता है। यह अच्छा होता यदि आपात की दशाओं में केन्द्र को समस्त भारत के लिये विधान बनाने की शक्ति होती। परन्तु शब्दों का जिस रूप में प्रयोग किया गया है वे आपात के लिये जितनी व्यापकता की आवश्यकता है उससे अधिक व्यापक है। उसमें कहा गया है: 'जब राष्ट्रीय हित के लिये वह आवश्यक तथा इष्टकर हो।' आपात की अपेक्षा राष्ट्रीय हित के लिये अधिक व्यापक क्षेत्र है। अत: आपात के लिये केन्द्र द्वारा विधान बनाने के पक्ष के तर्क प्रयुक्त नहीं होते हैं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यहां जो शक्ति दी गई है वह आवश्यकता से अधिक व्यापक है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** 'आपत्ति' पर आगामी अनुच्छेद में विचार किया गया है।

***श्री बी.एस. सर्वटे:** यदि यही बात है तो यह यहां अनावश्यक है। मैं यह और निवेदन करूंगा कि राज्य परिषद् को संकल्प पारित करने की शक्ति देने के पीछे यह

विचार प्रतीत होता है। मान लीजिये, ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जब यह आवश्यक है कि केन्द्र विधान बनाये। यदि यह उपबन्ध न हो तो यही विकल्प होगा कि समस्त प्रान्त और राज्य संकल्प पारित करें कि उस विशिष्ट आपात के लिये विधान बनायें। इस भद्दी रीति से बचने के लिये राज्य-परिषद् को संकल्प पारित करने की शक्ति दे दी गई है जो अधिकतर राज्य के प्रतिनिधियों से बना है। इस संकल्प के आधार पर पहले अवसर पर केन्द्र के लिये उपयुक्त कार्यवाही करना समुचित हो सकता है।

परन्तु दूसरे अवसर पर अर्थात् जब कि उस संकल्प को दुहराने का अवसर आता है, उसको प्रान्तों पर छोड़ा जा सकता था कि वे संकल्प पारित करें। प्रान्तों पर यह छोड़ दिया जाता कि वे यह विनिश्चय करें कि आपात वर्तमान है अथवा नहीं। यदि प्रान्तों को यह संतोष हो जाता है कि आपात वर्तमान है तो वे यह संकल्प पारित कर लेंगे कि केन्द्र समस्त भारत के लिये विधान बनाये। अत: मेरे विचार में ऐसा आता है कि ऐसे संकल्प पारित करने की शक्ति राज्य-परिषद् को देना अन्यायपूर्ण है। पहली बार तो वह न्याय युक्त हो सकता है। ऐसी दशाओं में यह समुचित हो सकता है। परन्तु यदि वस्तुस्थिति वैसी ही रहती है, तो प्रान्तों पर उन परिस्थितियों का निर्णय करना तथा पुन: संकल्प पारित करना छोड़ देना चाहिये। मेरे कहने का यह आशय है: राज्य-परिषद् को केवल एक बार संकल्प पारित करने की शक्ति होनी चाहिये। उसे दुबारा संकल्प पारित करने की शक्ति नहीं होनी चाहिये। ऐसी दशा में संकल्प पारित करना प्रान्तों पर छोड़ देना चाहिये। इस पर्यवेक्षण के साथ मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री एस.बी. कृष्णामूर्ति राव** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मैं अनुच्छेद 226 का समर्थन करता हूं। अनुच्छेद 223 संसद को अवशिष्ट शक्तियां प्रदान करता है। अनुच्छेद 227 राष्ट्रीय आपात की दशा में संसद को शक्तियां प्रदान करता है जबकि आपात की उद्घोषणा प्रवृत्त है और अनुच्छेद 229 प्रान्तों को अपने विधान मंडलों में केन्द्र से कार्यवाही करने के लिये निवेदन करने के संकल्प को पारित करने की शक्तियां प्रदान करता है। जब कोई प्रश्न राष्ट्रीय महत्त्व का रूप ग्रहण कर लेता है अथवा राष्ट्रीय हित का विषय हो जाता है, तो अनुच्छेद 229 में दी गई कार्यप्रणाली से अनुच्छेद 226 की कार्यप्रणाली अधिक वेगयुक्त है। मूल अनुच्छेद में जो दुष्टता थी उसको अधिकांश डा. अम्बेडकर और श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा अभी पेश किये गये संशोधन द्वारा दूर कर दी गई हैं यदि प्रति वर्ष संसद द्वारा संकल्प पारित किया जाता है तो क्या हानि है? आखिरकार राज्य-परिषद् के सदस्य कौन हैं? वे प्रान्तों के प्रथम सदन द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि हैं। यदि ऐसा संकल्प वास्तव में राज्यों के हित के विरुद्ध हो तो राज्य के विधान मंडल केन्द्र को यह कह सकते हैं कि वह संकल्प राज्यों के हित के विरुद्ध है। वास्तव में यहां प्रान्तों की शक्तियों के अपहरण करने का कोई प्रश्न नहीं है। वास्तविक राष्ट्रीय आपात की दशा में जब कि किसी प्रश्न ने राष्ट्रीय महत्त्व का रूप ग्रहण कर लिया है, एक वेगवान उपचार की व्यवस्था अनुच्छेद 226 के अधीन की गई है। यदि राज्य-परिषद् द्वारा पारित संकल्प किसी राज्य के हित के विरुद्ध है तो उस राज्य से यह आशा की जा सकती है कि वह अपने सदस्यों को सावधान करे और यह विश्वास कर ले कि वह संकल्प एक वर्ष के पश्चात् आगामी सत्र में पारित नहीं होगा। अनुच्छेद 226 के अधीन पारित किया हुआ संकल्प

[श्री एस.वी. कृष्णामूर्ति राव]

सामान्यतया एक वर्ष के लिये जारी रहेगा और जब कि राष्ट्रीय आपात वर्ष प्रति वर्ष जारी रहता है तो आगे और वह संकल्प एक वर्ष के लिये पारित हो सकता है। इन परिस्थितियों के अधीन राज्य-परिषद् को ऐसी शक्ति देना आवश्यक है और मैं इस अनुच्छेद का हार्दिक समर्थन करता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** अब इस विषय पर मत लिया जाये।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है ''कि अब इस विषय पर मत लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन पर मत लेने के पूर्व डा. अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** बहुत कुछ कहा जा चुका है। जब तक आप न चाहें कि मैं कुछ कहूं तो कदाचित मैं कुछ नहीं कहूंगा।

***अध्यक्ष:** यह आपकी इच्छा है।

प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 2775 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाये:

'कि अनुच्छेद 226 का पुनरांकन अनुच्छेद 226 के खंड (1) के रूप में किया जाये, और

(क) इस प्रकार पुनरांकित उपर्युक्त खंड के अन्त में 'while the resolution remains in force' (जब तक वह संकल्प प्रवृत्त है) शब्द प्रविष्ट किये जायें; तथा

(ख) इस प्रकार पुनरांकित उपर्युक्त अनुच्छेद 226 के खंड (1) के पश्चात् निम्न खंड प्रविष्ट किये जायें:

(2) A resolution passed under clause (1) of this article shall remain in force for such period not exceeding one year as may be specified therein :

Provided that if and so often as a resolution approving the continuance in force of any such resolution is passed in the manner provided in clause (1) of this article, such resolution shall continue in force for a further period of one year from the date on which under this clause it would otherwise have ceased to be in force.

(3) A law made by Parliament which Parliament would not but for the passing of a resolution under clause (1) of this article have been competent to make shall to the extent of the incompetency cease to have effect on the expiration of a period of six months after the resolution has ceased to be in force, except as respects things done or omitted to be done before the expiration of the said period.

[(2) खंड (1) के अधीन पारित संकल्प एक वर्ष से अनधिक ऐसी कालावधि के लिये प्रवृत्त रहेगा जैसा कि उसमें उल्लिखित हो:

परन्तु यदि और जितनी बार, किसी ऐसे संकल्प को प्रवृत्त बनाये रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प खंड (1) में उपबन्धित रीति से पारित हो जाये तो ऐसा संकल्प उस तारीख से आगे जिसको कि वह इस खंड के अधीन अन्यथा प्रवृत्त न रहता, एक वर्ष की और कालावधि तक प्रवृत्त रहेगा।

(3) संसद द्वारा निर्मित कोई विधि, जिसे संसद खंड (1) के अधीन संकल्प के पारण के अभाव में बनाने में सक्षम न होती, संकल्प के प्रवृत्त न रहने से छः मास की कालावधि की समाप्ति पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के अतिरिक्त प्रभावी न होगी, जो उक्त कालावधि की समाप्ति से पूर्व की गई या की जाने से छोड़ दी गई है।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 226 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 226 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 227

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद पर कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 227 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 227 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 228

***अध्यक्षः** एक संशोधन है जिसकी सूचना अनेक सदस्यों ने दी है, संशोधन संख्या 2779।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान्, उसका पेश करना आवश्यक नहीं है।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 228 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 228 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 229

(संशोधन संख्या 2781 और 2782 पेश नहीं किये गये।)

***श्री तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 229 के खंड (2) में 'but shall not' शब्दों के स्थान में 'and may also' शब्द रखे जायें।''

अनुच्छेद 229 के खंड (1) में यह दिया हुआ है कि यदि किसी प्रांतीय विधान-मंडल को यह प्रतीत हो कि किसी विषय पर प्रांत के लिये विधि बनाने की शक्ति संसद को है, तो उस विषय का विनियम उस प्रांत में संसद को विधि द्वारा करना चाहिये और यदि इस प्रभाव का संकल्प प्रांतीय विधान मंडल द्वारा पारित कर दिया जाता है तो संसद के लिये तदनुसार उस विषय को विनियमित करने के लिये अधिनियम पारित करना विधिवत् होगा और वह अधिनियम सम्बद्ध प्रांत पर लागू होगा। अनुच्छेद 229 के खंड (2) में यह कहा गया है कि खंड (1) में उल्लिखित रीति द्वारा पारित किया गया अधिनियम का संसद के अधिनियम द्वारा संशोधन अथवा निरसन किया जा सकता है, परन्तु प्रांतीय विधान मंडल के अधिनियम द्वारा उसका संशोधन अथवा निरसन नहीं होगा। मेरे संशोधन में यह प्रयास किया गया है कि संसद द्वारा इस प्रकार पारित किये गये किसी अधिनियम का संसद द्वारा संशोधन अथवा निरसन किया जा सकता है। सम्बद्ध प्रांतीय विधान मंडल द्वारा भी उसका संशोधन तथा निरसन किया जा सकता है। भारतीय सरकार के सन् 1935 के अधिनियम की धारा 103 में दिया है कि प्रांत के लिये बनाये गये संसद के अधिनियम का संशोधन अथवा निरसन सम्बद्ध प्रांतीय विधान मंडल द्वारा किया जा सकता है। मेरा संशोधन भारतीय सरकार की धारा 103 पर पूर्णतया आधृत है। पहले यह हुआ करता था कि प्रांत केन्द्रीय विधान मंडल को संकल्प भेजा करता था और उस प्रांत के लिये उसके अनुसार भारतीय सरकार अधिनियम बनाती थी और भारतीय सरकार के अधिनियम की धारा 103 के अधीन सम्बद्ध प्रांत द्वारा इस अधिनियम अथवा विधि में संशोधन अथवा निरसन किया जा सकता था। परन्तु अब इस अनुच्छेद 229 (2) के अनुसार वह संशोधन नहीं कर सकता है। श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि यह एक बड़ी कठिनाई है। यद्यपि मुझे विश्वास है कि मेरा संशोधन बहुत ही युक्तियुक्त है परन्तु फिर भी यह सदन मेरे संशोधन से सहमत नहीं है, तो मैं उसके स्थान में इस अनुच्छेद का इस प्रकार संशोधन करने के लिये सदन से प्रार्थना करूंगा कि उन उपबन्धों में जिनको केन्द्रीय विधान मंडल ने निवेदन करने पर पारित किया था, प्रांतों को उस अधिनियम में संशोधन करने की शक्ति हो। शायद मैं इस बात को समझ सकूं कि भविष्य में यह सदन यह चाहता है कि यदि प्रांत संबंधी कोई नियम प्रांत के निवेदन पर पारित किया जाता है, तो उस अधिनियम का संशोधन उस प्रांत द्वारा नहीं किया जा सकता तथा केन्द्र द्वारा ही उसका संशोधन किया जा सकता है। शायद मैं इस बात को समझ सकूं, यद्यपि समझ नहीं पाता हूं, पर मैं यह प्रार्थना करूंगा कि उन अधिनियमों के संबंध में जिनका पारण सम्बद्ध विशिष्ट प्रांत के निवेदन पर केन्द्रीय सभा तथा राज्य-परिषद् द्वारा किया गया हो कोई ऐसा उपबंध, जिसको मैंने अभी-अभी विचारा है, होना चाहिये कि सम्बद्ध प्रांत को उस अधिनियम का संशोधन अथवा निरसन करने दिया जाये। मैं आशा करता हूं कि मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर ने मुझे ध्यानपूर्वक सुन लिया है और जो कुछ मैंने कहा है उसे वे समझ लेंगे।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मै प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2781 और 2783 के निर्देश से, अनुच्छेद 229 के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:

'(1) If it appears to the Legislatures of two or more States to be desirable that any of the matters with respect to which Parliament has no power to make laws for the States except as provided in articles 226 and 227 of this Constitution should be regulated in such States by Parliament by law, and resolutions to that effect are passed by the House or, where there are two Houses, by both the Houses of the Legislature of each of the States, it shall be lawful for Parliament to pass an Act for regulating that matter accordingly and any Act so passed shall apply to such State and to any other State by which it is adopted afterwards by resolution passed in that behalf by the House or, where there are two Houses, by each of the Houses of the Legislature of that State.' ''

[(1) यदि किन्ही दो अथवा अधिक राज्यों के विधान मंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो कि उन विषयों में से, जिनके बारे में संसद को, इस संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 में उपबन्धित रीति के अतिरिक्त, उन राज्यों के लिये विधि बनाने की शक्ति नहीं है, किसी विषय का विनियमन ऐसे राज्यों में संसद विधि द्वारा करे तथा यदि उन राज्यों में से प्रत्येक विधान मंडल के सदन अथवा जहां दो सदन हों वहां दोनों सदनों ने उस लिये संकल्पों का पारण किया है, तो उस विषय का तदनुकूल विनियमन करने के लिये किसी अधिनियम का पारण करना संसद के लिये विधि-संगत होगा, तथा इस प्रकार पारित कोई अधिनियम ऐसे राज्यों को लागू होगा तथा किसी अन्य राज्य को, जो तत्पश्चात् अपने विधान मंडल के सदन अथवा जहां दो सदन हों वहां दोनों सदनों में से प्रत्येक से उस लिये पारित संकल्प द्वारा उसको अंगीकार करे, लागू होगा।]

थोड़े से संक्षिप्त वाक्यों में मैं इस संशोधन की व्याख्या करना चाहूंगा। जिस रूप में मूल अनुच्छेद था उसमें कहा गया था: ''यदि एक अथवा अधिक राज्यों के विधान मंडल अथवा विधान मंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो, इत्यादि इत्यादि।'' नये संशोधन में कहा गया है: ''यदि किन्हीं दो अथवा अधिक राज्यों के विधान मंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो, इत्यादि इत्यादि।'' नये संशोधन के अधीन विधि बनाने के लिये संसद की सहायता प्राप्त करने का अधिकार होगा, यदि केवल दो या अधिक राज्य मिल जाते हैं और संकल्प भेजते हैं। अनुच्छेद 229 के उपखंड (1) में अन्य परिवर्तन इस मुख्य संशोधन के आनुषंगिक मात्र है; अर्थात् शक्ति को केवल तभी सहायतार्थ काम में लिया जा सकता है जब कि दो अथवा अधिक राज्य चाहें न कि एक राज्य।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** मुझे बड़ी खुशी है कि इस खंड को संविधान में रखा गया है। दो प्रांत संयुक्त प्रांत और बिहार में शक्कर के विधान का मैं उदाहरण दूंगा। इन दो प्रांतों में समस्त देश के लगभग 80 प्रतिशत कारखाने हैं और सन् 1937 में यह

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

अनुभव किया गया जबकि यह उद्योग प्रायः मिटने वाला था, कि यदि दोनों प्रांत मिलकर कार्यवाही नहीं करेंगे तो दोनों स्थानों में उद्योग का नाश हो जायेगा। उन्होंने क्या किया? संविधान में ऐसी कोई शक्ति नहीं थी जिसके द्वारा केन्द्र केवल दो प्रांतों के लिये विधि बना सकता था, अतः उन्होंने यह किया कि दोनों प्रांतों ने एक ही विधि बनाई और परस्पर करार तथा अभिसमयों के द्वारा वे मिलकर कार्यवाही करने लगे और उन्होंने एक संयुक्त नियंत्रण मंडली बनाई, इत्यादि इत्यादि। परन्तु मैं समझता हूं कि संविधान में इस खंड के अधीन अनेक राज्यों के लिये मिलकर संयुक्त कार्यवाही करना संभव है। इसी प्रकार दूसरा उदाहरण दामोदर घाटी प्राधिकरण का लीजिये। संसद ने एक विधि बनाई है, जो वास्तव में समस्त देश को लागू है, परन्तु इस विषय में वास्तव में बिहार और बंगाल के प्रांतों का संबंध है। ऐसे उदाहरण भी हो सकते हैं जहां तीन या चार प्रांत अन्तर्ग्रस्त हों और यदि वे संकल्प पारित कर लेते हैं तो संसद उस विधि का पारण कर सकती है। मैं समझता हूं कि संविधान में यह अनुच्छेद एक बड़ा ही कल्याणकारी उपबन्ध है, जिसके द्वारा अनेक राज्यों में सहयोग हो सकता है और वे उन योजनाओं की पूर्ति कर सकते हैं, जो संयुक्त रूप में समस्त प्रांतों के लिये हितकर है तथा संसद को उन राज्यों के विधान मंडलों की सिफारिश के अनुसार विधान बनाने की शक्ति दे दी गई है। श्रीमान्, मैं इसका सम्पूर्ण हृदय से समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, केवल सभा का ध्यान इस अनुच्छेद के खंड (2) की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। भारतीय सरकार के अधिनियम में मूल अनुच्छेद से इसमें एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। जिस रूप में भारतीय सरकार के अधिनियम में धारा 103 अनुकूलित की गई है उसके पीछे के भाग में यह पाठ है: ''कि खंड (1) के अनुसार पारित अधिनियम का निरसन अथवा संशोधन राज्य विधान मंडल अथवा प्रांतीय विधान मंडल कर सकेगा।'' अब खंड (2) का उपबंध यह है: ''संसद द्वारा इस प्रकार पारित कोई अधिनियम इसी रीति से पारित या अंगीकृत संसद के अधिनियम से संशोधित या निरसित किया जा सकेगा, किन्तु किसी राज्य के संबंध में, जहां कि वह लागू होता है, उस राज्य के विधान मंडल के अधिनियम द्वारा संशोधित या निरसित न किया जायेगा।'' यह अन्तर जान बूझकर ग्रहण किया गया है क्योंकि जब किसी एक राज्य द्वारा निर्मित किसी विधि के अनुसरण में दो अथवा अधिक राज्यों ने अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों को अपने ऊपर ले लिया है, तो एक राज्य का उन आभारों तथा उत्तरदायत्वों से विमुख होना स्पष्टतया संभव नहीं होना चाहिये। साथ ही साथ मुझे भय है कि खंड (2) की उपस्थिति सब राज्यों को इस धारा के प्रयोग में लाने से रोक देगी अथवा निरुत्साहित करेगी। मैं चाहता हूं कि किसी प्रकार से यह रखना संभव होता कि यदि समस्त सम्बद्ध राज्य-विधि में संशोधन अथवा निरसन करना चाहें तो संसद को तदनुकूल कार्य करना चाहिये। वस्तुस्थिति जैसी है उसके अनुसार समस्त खंड अप्रवृत्त हो सकता है क्योंकि कोई भी राज्य उस फंदे में नहीं फंसना चाहेगा, जिससे वह बाहर नहीं निकल सकता है। जैसी वस्तुस्थिति है उसके अनुसार वे संसद को शक्ति दे तो सकते हैं; पर एक बार अधिनियम के पारित होने पर राज्य लगभग शक्तिविहीन हो जायेंगे, चाहे वह विषय ऐसा ही हो, जिस पर कि राज्य

को शक्ति प्राप्त है। मैं समझता हूं कि जिस रूप में खंड (2) उपस्थित है, उस रूप में उसकी उलझनों पर विचार करने का कुछ अवसर होना चाहिये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् ने जो प्रश्न उठाया है उसको मैंने ठीक-ठीक समझ लिया है, पर मेरा विचार है कि उन्होंने उपखंड (2) को सावधानी से नहीं पढ़ा। महत्त्वपूर्ण शब्द 'in like manner' (उसी प्रकार) हैं, जिससे कि राज्य के विधान मंडल, जिनके हित में यह विधान उसी रूप में पारित किया जाता है, अर्थात् संकल्प द्वारा यदि इस बात में सहमत है कि उस विधान का संशोधन अथवा निरसन किया जाये तो संसद को ऐसा करना पड़ेगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** 'May be amended' (संशोधित किया जा सकता है)।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** 'May' का अर्थ 'shall' है। ऐसी कोई कठिनाई नहीं है।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

> ''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2781 और 2783 के निर्देश से अनुच्छेद 229 के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:
>
> '(1) If it appears to the Legislatures of two or more States to be desirable that any of the matters with respect to which Parliament has no power to make laws for the States except as provided in article 226 and 227 of this Constitution should be regulated in such States by Parliament by law, and resolutions to that effect are passed by the House or, where there are two Houses, by both the Houses of the Legislature of each of the States, it shall be lawful for Parliament to pass an Act for regulating that matter accordingly and any Act so passed shall apply to such States and to any other State by which it is adopted afterwards by resolution passed in that behalf by the House or, where there are two Houses, by each of the Houses of the Legislature of that State.' ''
>
> [(1) यदि किन्ही दो अथवा अधिक राज्यों के विधान मंडलों को यह वांछनीय प्रतीत हो कि उन विषयों में से, जिनके बारे में संसद को, इस संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 में उपबन्धित रीति के अतिरिक्त, उन राज्यों के लिये विधि बनाने की शक्ति नहीं है, किसी विषय का विनियमन ऐसे राज्यों में संसद विधि द्वारा करे तथा यदि उन राज्यों में से प्रत्येक विधान मंडल के सदन अथवा जहां दो सदन हों वहां दोनों सदनों ने उस लिये संकल्पों का पारण किया है, तो उस विषय का तदनुकूल विनियमन करने के लिये किसी अधिनियम का पारण करना संसद के लिये विधि-संगत होगा, तथा इस प्रकार पारित कोई

[अध्यक्ष]

अधिनियम ऐसे राज्यों को लागू होगा तथा किसी अन्य राज्य को, जो तत्पश्चात् अपने विधान मंडल के सदन अथवा जहां दो सदन हों वहां दोनों सदनों में से प्रत्येक से उस लिये पारित संकल्प द्वारा उसको अंगीकार करे, लागू होगा।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 229 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 229 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 230

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 230 संविधान का अंग बने।''

(संशोधन संख्या 2784 पेश नहीं किया गया।)

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 230 में 'for any State or part thereof' (किसी राज्य अथवा उसके भाग के लिये) शब्दों के स्थान में 'for the whole or any part of the territory of India' (भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के लिये) शब्द रखे जायें।''

(संशोधन संख्या 2786 और 2787 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 230 में 'for any State or part thereof' (किसी राज्य अथवा उसके भाग के लिये) शब्दों के स्थान में 'for the whole or any part of the territory of India' (भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के लिये) शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 230 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 230 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 231

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 231 संविधान का अंग बने।''

(संशोधन संख्या 2789 और 2790 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** एक और संशोधन संख्या 196 है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान्, मैं औपचारिक रूप में संशोधन संख्या 2789 को पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 231 के खंड (2) को अपमार्जित किया जाये।''

श्रीमान्, यह न्यूनाधिक रूप में उसी संशोधन के आधार पर है जिसको हम स्वीकार कर चुके हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2788 के निर्देश से अनुच्छेद 231 के खंड (2) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जायें।''

***श्री ए. थानू पिल्ले** (तिरुवांकुर राज्य): अध्यक्ष महोदय, जब इस मसौदे को आरम्भ में तैयार किया गया था, उस समय भाग 3 के राज्यों को उसी आधार पर रखने का कोई विचार न था, जिस पर प्रथम अनुसूची के भाग 1 के राज्य हैं। वास्तव में यह बिल्कुल नया विचार है कि संसद के विधान बनाने के सम्बन्ध में भाग 3 के राज्यों को भाग 1 के राज्यों के समान आधार पर लाया जाये, और इसके लिये विभिन्न अनुच्छेदों ने जिन पर हम विचार कर रहे हैं, आवश्यक संशोधन किये जा रहे हैं जब हम अनुच्छेद 225 पर आये तो उसे स्थगित कर दिया गया। वह भाग 3 के राज्यों के लिये संसद के विधान बनाने के अधिकार के संबंध का है और इस कारण विचार स्थगित किया गया है कि यह स्पष्ट है कि केन्द्र अथवा संसद और भाग 3 के राज्यों के संबंध अभी पूर्णतया निश्चित नहीं किये गये हैं यह ठीक है, पर मैं जिस बात की ओर संकेत करना चाहता हूं वह यह है अब तक विधि बनाने के संबंध में केन्द्रीय विधान मंडल का अधिकार भाग 3 के राज्यों तक विस्तृत न था। तिरुवांकुर और मैसूर जैसे राज्यों में स्थानीय विधान मंडल द्वारा विधि बनती चली आ रही है। इस सदन की सूचना में मैं यह बात लाना चाहता हूं कि राज्यों की विधि और शेष भारत की विधि में बहुत अन्तर है। मैं यह कहूंगा कि तिरुवांकुर में हत्या के लिये हमने मृत्यु दंड को हटा दिया है। अब यह विषय समवर्ती सूची में आयेगा। ऐसे ही अन्य अनेक विषय हैं। इस बात का सामंजस्य आप अनुच्छेद 231 के उपबंधों से किस प्रकार कर रहे हैं; अर्थात् यह कि समस्त वर्तमान विधियां, केवल वे ही नहीं जिनका अधिनियम भविष्य में संसद करेगी वरन् वे वर्तमान विधियां भी जिनका केन्द्रीय विधान मंडल ने अब तक अधिनियम कर दिया है, प्रचलित रहेंगी जब कभी भी यदि राज्य की विधियों और केन्द्रीय विधियों में परस्पर विरोध हो तो इन दो प्रकार की विधियों को एक आधार पर लाना और उन में सामंजस्य करना बड़ा भारी कार्य होगा। जब तक यह नहीं होता तब तक भाग 3

[श्री ए. थानू पिल्ले]

के राज्यों में अनुच्छेद 231 का प्रवर्तन अधिकांश रूप में असंभव होगा। मुझे इस रूप का कोई उपबंध नहीं मिलता है जिसमें इस कठिनाई का निराकरण प्रस्थापित किया गया हो। मैं केवल इस बात की सभा को सूचना देना चाहता था जिससे कि इस बड़ी कठिनाई को दूर किया जा सके और संविधान में उपयुक्त उपबंध रखे जा सकें। समानुरूपता लाने के लिये बहुत सा कार्य करना पड़ेगा। साधारणतया भारतीय विधियों को राज्यों में ग्रहण करना होगा परन्तु कुछ विषयों में राज्यों के नियमों का समस्त देश में पुरस्थापन करना होगा। उदाहरणार्थ, मृत्यु दंड के संबंध में तिरुवांकुर से पुरानी व्यवस्था को अंगीकार करने और हत्या के लिये मृत्युदंड पुनः आरोप करने के लिये नहीं कहा जा सकता। प्रांतों की अपेक्षा राज्यों में जहां कहीं भी हमें अधिक प्रगतिशील विधान मिले उसे भारतीय संसद को स्वीकार करना होगा और समानुरूपता लानी होगी। मैं डा. अम्बेडकर से यह जानना चाहता हूं कि इस कठिनाई को किस प्रकार दूर किया जायेगा। मैं आशा करता हूं कि समानुरूपता लानी होगी और जो इस समय इसके लिये प्रयत्नशील हैं वे उन लोगों को प्रेरित करने में सफल होंगे जो राज्यों में प्रशासन तथा विधान के प्रति उत्तरदायी हैं कि वे समस्त देश पर प्रभाव डालने के विषयों में समान विधान अपनाने के लिये सहमत हों। यदि हम इस विषय में जो कठिनाई हमारे सामने है उनकी गुरुता का अनुभव किये बिना इस अनुच्छेद 231 को पारित करते हैं तो यह एक गलत कदम होगा। इस सदन तथा विशेषकर डा. अम्बेडकर की सूचना के लिये मैं इस विषय को रखना चाहता हूं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं इस बात से सहमत हूं कि श्री थानू पिल्ले के प्रश्न के लिये व्याख्या अपेक्षित है। वह व्याख्या यह है। मुझे विश्वास है कि वे इस बात से सहमत होंगे कि विरोध के संबंध में अनुच्छेद 231 में जिस नियम का उल्लेख किया गया है, उसका पालन केवल वहीं तक करना होगा जहां तक कि संसद द्वारा निर्मित भावी विधि का संबंध है। वे देखेंगे कि अनुच्छेद 231 में ''चाहे पहले अथवा बाद में पारित'' शब्द हैं। निःसंदेह इस संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् संसद द्वारा निर्मित विधि के संबंध में विरोध के नियम का दोनों भाग 1 के राज्यों तथा भाग 3 में उल्लिखित राज्यों द्वारा निर्मित विधियों के संबंध में समान रूप से प्रयुक्त होगा। संविधान के पारित होने से पूर्वकालीन निर्मित विधियों के संबंध में विरोध के प्रश्न की स्थिति यह है। जैसा कि मैने कई बार इस सदन में कहा है कि यह हमारी इच्छा है और मुझे विश्वास है कि सदन की भी यही इच्छा है कि भाग 1 और भाग 3 के राज्यों में परस्पर कोई विशिष्ट भेद किये बिना समस्त राज्यों में संविधान के समस्त अनुच्छेदों को साधारणतया प्रयुक्त करना चाहिये। यह अच्छी बात नहीं है कि जब कभी आप कोई अनुच्छेद पारित करें तो भाग 3 के राज्यों को कुछ बचत की सुविधा देने के लिये उस अनुच्छेद के साथ एक परन्तुक प्रविष्ट करें, यद्यपि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि भाग 3 के राज्यों द्वारा निर्मित विधियों के संबंध में कुछ बचत करनी होगी। जैसा कि मैंने कहा था, एक नये भाग अथवा एक नई अनुसूची में, जिसमें भाग 3 के राज्यों के संबंध में रक्षण का अधिनियम बनाया जायेगा, इस कार्य का करना प्रस्थापित किया गया है जिससे कि जहां तक इस संविधान से पूर्व की निर्मित विधियों के प्रवर्त्तन में आने का संबंध है, उनकी रक्षा उस विशेष प्रपत्र अथव विशेष अनुसूची में किसी

अधिनियमित प्रावधान द्वारा की जायेगी। इस विषय में मैं एक बात और कहना चाहूंगा, वह यह है कि यद्यपि भाग 3 में राज्यों के लिये उस विशेष भाग में रक्षण देना प्रस्थापित किया गया है, फिर भी वह रक्षण अनन्य नहीं हो सकता क्योंकि उसमें दिया गया रक्षण का, कम से कम उस विशेष भाग में कुछ उपबंधों का अनुच्छेद 307 के अनुसार पालन किया जायेगा, जो राष्ट्रपति को अनुकूलन करने का अधिकार देता है। वह अनुकूलन भाग 1 में तथा भाग 3 में राज्यों को लागू होगा। अतः जहां तक संसद द्वारा अथवा भाग 3 के राज्यों के विधान मंडलों द्वारा इस संविधान के प्रारंभ के पूर्व निर्मित विधि का संबंध है, उनकी सर्वप्रथम अनुच्छेद 231 के प्रवर्त्तन से रक्षा की जायेगी, परन्तु वे अनुकूलन पर विचार करने वाले अनुच्छेद 307 के अधीन रहेंगी।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2788 के निदेश से अनुच्छेद 231 के खंड(1) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जायें।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 231 संविधान का अंग बने।'

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 231 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 232

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 232 को लेते हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 232 के शीर्षक 'Restriction on Legislative Powers' (विधायिनी शक्तियों पर निर्बन्धन) को निकाल दिया जाये।''

आपकी अनुमति से मैं अपना नया संशोधन पेश करता हूं:

''(1) कि 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जायें; और

(2) अनुच्छेद 232 के खंड (क) के पश्चात् निम्न खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(aa) where the recommendation required was that of the Ruler, either by the Ruler or by the President.' ''

[(कक) जहां शासक की सिफारिश अपेक्षित थी, वहां शासक या राष्ट्रपति ने]

श्रीमान्, मैं यह समझ गया हूं कि 'शासक' शब्द के प्रयोग पर कुछ भावुक आपत्ति है। मैं इस भावुकता को स्वीकार करने के लिये तैयार हूं और इस कारण मैं यह प्रस्थापित

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

करना चाहता हूं कि सदन इस संशोधन को इस समय स्वीकार कर ले और 'शासक' शब्द के स्थान में कोई दूसरा अच्छा शब्द खोजने के कार्य को मसौदा-समिति पर छोड़ दिया जाये। अन्यथा केवल इसी कारण के आधार पर कि इस समय हम 'शासक' शब्द के स्थान में कोई अधिक उपयुक्त शब्द नहीं खोज सकते हैं, इस पूरे के पूरे अनुच्छेद को व्यर्थ ही स्थगित रखना पड़ेगा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''कि अनुच्छेद 232 के शीर्षक 'Restriction on Legislative Powers' (विधायिनी शक्तियों पर निर्बंधन) को निकाल दिया जाये।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 232 में—

(1) 'Part I' (भाग 1) शब्द और संख्या के पश्चात् 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और संख्या प्रविष्ट की जायें; और

(2) अनुच्छेद 22 के खंड (क) के पश्चात् निम्न खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(aa) where the recommendation required was that of the Ruler, either by the Ruler or by the President.' ''

[(कक) जहां शासक की सिफारिश अपेक्षित थी, वहां शासक या राष्ट्रपति ने]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 232 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 232 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 233

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 233 को लेते हैं।

(पंचम सप्ताह की सूची के संशोधन संख्या 2794 और 2795 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 233 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 233 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 234

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 234 को लेते हैं।

(संशोधन संख्या 2796, 2797 और 2798 पेश नहीं किये गये।)

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 234 में निम्न नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(3) Where by virtue of any direction given to a State as to the construction or maintenance of any means of communication under the last preceding clause of this article costs have been incurred in excess of those which would have been incurred in the discharge of the normal duties of the State if such direction had not been given, there shall be paid by the Government of India to the State such sum as may be agreed or, in default of agreement, as may be determined by an arbitrator appointed by the Chief Justice of India in respect of the extra costs so incurred by the State.' ''

[(3) जहां इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती खंड के अधीन संचार साधनों के निर्माण अथवा उनको बनाये रखने के बारे में, किसी राज्य को दिये गये किसी निदेश के पालन में उससे अधिक खर्च होता है जो, यदि ऐसा निदेश नहीं दिया गया होता तो, राज्य के मामूली कर्त्तव्यों के पालन में खर्च होता, वहां उस राज्य द्वारा किये गये अतिरिक्त खर्चों के बारे में भारत सरकार द्वारा उस राज्य को ऐसी राशि दी जायेगी जो करार पाई जाये अथवा करार के अभाव में, जिसे भारत के मुख्य न्यायाधिपति द्वारा नियुक्त मध्यस्थ निर्धारित करे।]

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 234 में निम्न नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(3) Where by virtue of any direction given to a State as to the construction or maintenance of any means of communication under the last preceding clause of this article costs have been incurred in excess of those which would have been incurred in the discharge of the normal duties of the State if such direction had not been given, there shall be paid by the Government of India to the State such sum as may be agreed or, in default of agreement, as may be determined by an arbitrator appointed by the Chief Justice of India in respect of the extra costs so incurred by the State.' ''

[(3) जहां इस अनुच्छेद के पूर्ववर्ती खंड के अधीन संचार साधनों के निर्माण अथवा उनको बनाये रखने के बारे में, किसी राज्य को दिये गये किसी निदेश के पालन में उससे अधिक खर्च होता है जो, यदि ऐसा निदेश नहीं दिया गया होता तो, राज्य के मामूली कर्त्तव्यों के पालन में खर्च होता, वहां उस राज्य द्वारा किये गये अतिरिक्त खर्चों के बारे में भारत सरकार द्वारा उस राज्य को ऐसी राशि दी जायेगी जो करार पाई जाये अथवा करार के अभाव में, जिसे भारत के मुख्य न्यायाधिपति द्वारा नियुक्त मध्यस्थ निर्धारित करे।]

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 234 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 234 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 235

(संशोधन संख्या 2800 और 2801 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 235 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 235 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 236 और 237 स्थगित किये जाते हैं।

अनुच्छेद 238

(संशोधन संख्या 2805 और 2806 पेश नहीं किये गये।)

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं औपचारिक रूप में संशोधन संख्या 2807 को पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 238 के परन्तुक में 'under the terms of any agreement entered into in that behalf by such State with the Union' शब्दों के स्थान में 'under the terms of any instrument or agreement entered into in that behalf by such State with the Government of the Dominion of

India or the Government of India or of any law made by Parliament under article 2 of this Constitution' शब्द रखे जायें।''

मैं और आगे प्रस्ताव पेश करता हूं:

''(1) कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2807 के निर्देश से अनुच्छेद 238 के खंड (2) में 'by law' शब्दों के पश्चात् 'made by Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।

(2) कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2807 के निर्देश से अनुच्छेद 238 का परन्तुक अपमार्जित किया जाये।''

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''(1) कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2807 के निर्देश से अनुच्छेद 238 के खंड (2) में 'by law' शब्दों के पश्चात् 'made by Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।

(2) कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2807 के निर्देश से अनुच्छेद 238 का परन्तुक अपमार्जित किया जाये।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 238 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 238 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 239

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 239 में 'State' शब्द के पूर्व, जहां कि वह पंक्ति 29 में दूसरी बार आता है, 'other' शब्द प्रविष्ट किया जाये।''

(संशोधन संख्या 2810 पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 239 में 'State' शब्द के पूर्व, जहां कि वह पंक्ति 29 में दूसरी बार आता है, 'other' शब्द प्रविष्ट किया जाये।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 239 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 239 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 240

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 240 के खंड (1) के स्थान में निम्न नये खंड रखे जायें,

'(1) If the President receives such a complaint as the aforesaid, he shall, unless he is of opinion that the issues involved are not of sufficient importance to warrant such action, appoint a Commission to investigate in accordance with such instructions as he may give to them, and to report to him on the matters to which the complaint relates, or that of those matters as he may refer to them.

(1a) The Commission shall consist of such persons having special knowledge and experience in irrigation, engineering, administration, finance or law as the President may deem necessary for the purposes of such investigation.' ''

[(1) यदि राष्ट्रपति के पास कोई उपरोक्त शिकायत आती है और यदि उसकी यह सम्मति नहीं है कि अन्तर्ग्रस्त वाद पर इस प्रकार की कार्यवाही करने के लिये यथेष्ट रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं है तो वह अपने अनुदेशों के अनुसार, जिनको वह देगा, अनुसंधान करने के लिये एक आयोग नियुक्त करेगा जो उन विषयों पर, जिनका शिकायत से संबंध है, या उन विषयों पर, जिनका राष्ट्रपति निर्देश करे, राष्ट्रपति के पास प्रतिवेदन भेजेगा।

(1क) आयोग में ऐसे व्यक्ति होंगे जिनको इस अनुसंधान के प्रयोजनार्थ सिंचन, यंत्रकला, प्रशासन, वित्त अथवा विधि का उतना विशिष्ट ज्ञान तथा अनुभव हो जितना राष्ट्रपति आवश्यक समझे।]

(संशोधन संख्या 2812 से 2815 तक पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 240 के खंड (1) के स्थान में निम्न नये खंड रखे जायें,

'(1) If the President receives such a complaint as the aforesaid, he shall, unless he is of opinion that the issues involved are not of sufficient importance to warrant such action, appoint a Commission to investigate in accordance with such instructions as he may give to

them, and to report to him on the matters to which the complaint relates, or that of those matters as he may refer to them.

(1a) The Commission shall consist of such persons having special knowledge and experience in irrigation, engineering, administration, finance or law as the President may deem necessary for the purposes of such investigation.' ''

[(1) यदि राष्ट्रपति के पास कोई उपरोक्त शिकायत आती है और यदि उसकी यह सम्मति नहीं है कि अन्तर्ग्रस्त वाद पर इस प्रकार की कार्यवाही करने के लिये यथेष्ट रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं है तो वह अपने अनुदेशों के अनुसार, जिनको वह देगा, अनुसंधान करने के लिये एक आयोग नियुक्त करेगा जो उन विषयों पर, जिनका शिकायत से संबंध है, या उन विषयों पर, जिनका राष्ट्रपति निर्देश करे, राष्ट्रपति के पास प्रतिवेदन भेजेगा।

(1क) आयोग में ऐसे व्यक्ति होंगे जिनको इस अनुसंधान के प्रयोजनार्थ सिंचन, यंत्रकला, प्रशासन, वित्त अथवा विधि का उतना विशिष्ट ज्ञान तथा अनुभव हो जितना राष्ट्रपति आवश्यक समझे।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 240 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 240 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 241

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि अनुच्छेद 241 में 'in any State' (किसी राज्य में) शब्दों के स्थान में 'in any other State' (किसी अन्य राज्य में) शब्द रखे जायें।''

मैं समझता हूं कि उसी कारण के आधार पर यह संशोधन आवश्यक है जिसके आधार पर डा. अम्बेडकर ने पूर्ववर्ती अनुच्छेद पर संशोधन पेश किया था। मैं उनको एक अवसर यह विचार करने के लिये देना चाहता हूं कि क्या यह आवश्यक नहीं है। यदि इसको आवश्यक नहीं समझा जाता है तो मैं इस पर जोर नहीं देता हूं।

(कुछ परामर्श के पश्चात्) श्रीमान्, यह आवश्यक प्रतीत नहीं होता है और इस संशोधन को वापस लेने के लिये अनुज्ञा प्राप्त करने की मैं प्रार्थना करता हूं।

***अध्यक्ष:** क्या अपने संशोधन को वापस लेने के लिये इस सदन की माननीय सदस्य को अनुमति है?

सभा की अनुमति से संशोधन वापस लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 241 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 241 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 242

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 242 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 242 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 243 से 245

***अध्यक्ष:** इसके बाद हम अनुच्छेद 243 पर आते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** किसी दशा में भी अनुच्छेद 244 को तो स्थगित रखना ही पड़ेगा क्योंकि केन्द्र और राज्यों में परस्पर वित्तीय संबंधों पर शासन करने वाले उपबंधों के अध्याय पर हमने विचार नहीं किया। मुझसे श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने यह कहा है कि अनुच्छेद 243 की भाषा का भी पुनरीक्षण अपेक्षित है। अत: हम अनुच्छेद 243, 244 और 245 को स्थगित रखें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** अनुच्छेद 245 के स्थगित रखने की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** वह अनुच्छेद 243 और 244 के संबंध का है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** अन्य दो अनुच्छेदों का चाहे किसी रीति से संशोधन किया जाये, हम अनुच्छेद 245 को तो ले सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** शायद हम अनुच्छेद 245 को भी स्थगित रखना पसंद करें। जब हमने अनुच्छेद 243 और 244 पर विनिश्चिय नहीं किया है तो इस अनुच्छेद को भी स्थगित किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि उसको स्थगित रखना अच्छा है।

एक संशोधन की सूचना है कि अनुच्छेद 243 के पश्चात् एक नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये। यह सूचना श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका द्वारा दी गई है। उसे भी हम स्थगित करेंगे।

अनुच्छेद 246

(संशोधन संख्या 2828, 2829 और 2830 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

''कि अनुच्छेद 246 संविधान का अंग बने।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 246 संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***अध्यक्ष:** हम अब दूसरे भाग पर आते हैं। क्या हम उसे ले सकते हैं?

***श्री महावीर त्यागी:** हमने बड़ी द्रुतगति से कार्य किया है—जितनी हमने आशा की थी उससे भी अधिक द्रुतगति से। मैं नहीं समझता हूं कि लोगों ने उन उपबन्धों का अध्ययन कर लिया हो—कम से कम मैंने तो अपने आप को इसके लिये तैयार नहीं किया है।

***अध्यक्ष:** तो फिर हम पीछे लौटें और पुराने सबकों को दुराहयें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** उच्च न्यायालय संबंधी अध्याय में हम जिन उपबन्धों को छोड़ आये हैं उनको ले सकते हैं।

***अध्यक्ष:** क्या हम दंड के अभियोगों में उच्चतम न्यायालय को अपील के प्रश्न को ले लें जिसको हमने छोड़ दिया था—अर्थात् अनुच्छेद 112-ख? इस पर संशोधनों का ढेर है उस दिन हमने इसको इस आशा में स्थगित कर दिया था कि शायद कोई सर्वमान्य हल निकल आये और केवल एक ही संशोधन रहे। पर मैं देखता हूं कि दिन प्रतिदिन संशोधनों की संख्या बढ़ रही है। क्या हम इस विषय को ले लें?

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): उच्च न्यायालय संबंधी उपबन्ध अनुच्छेद 207 से लिये जा सकते हैं।

***अध्यक्ष:** मुझे इस बात का डर है कि और अधिक संशोधन आ जायेंगे क्योंकि मेरे पास इस समय भी संशोधन आ रहे हैं।

अनुच्छेद 111-क और 111-ख

***अध्यक्ष:** श्री भार्गव संशोधन संख्या 12 को पेश कर सकते हैं जिसकी सूचना पंचम सप्ताह की प्रथम सूची में दी जा चुकी है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** श्रीमान्, इस संशोधन को पेश करने से पूर्व मैं उसके पूर्व इतिहास को संक्षेप में निर्देशित करूंगा। अनुच्छेद 111 के खंड (2) के एक नवीन खंड को प्रविष्ट करने के लिये जब मैंने छपी सूची में संशोधन संख्या 1927 की सूचना दी थी उस समय स्थिति भिन्न प्रकार की थी। उसके बाद जब अनुच्छेद 110 पर चर्चा हुई.....

***श्री महावीर त्यागी:** कृपया उस अनुच्छेद को पढ़ दीजिये जिसका आप उल्लेख कर रहे हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** जिस संशोधन को श्री त्यागी मुझसे पढ़वाना चाहते हैं वह इस प्रकार है:

''कि अनुच्छेद 111 के खंड (2) के पश्चात् निम्न नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(3) An appeal shall lie to the Supreme Court against the judgments of the High Courts in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction in the following cases:

(a) convicting accused persons as a result of acceptance of appeals against their acquittal,

(b) sentencing to or confirming the sentence of death or transportation for life,

(c) in respect of other matters when the High Court grants a certificate that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[(3) भारत राज्य-क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी निर्णयों की निम्न अभियोगों में अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(क) अभियुक्त व्यक्तियों को उनकी विमुक्ति के विरुद्ध अपील की स्वीकृति के फलस्वरूप दोष सिद्ध करने वाले,

(ख) मृत्यु दंडादेश देने अथवा आजन्म निर्वासन करने वाले अथवा इनकी सम्पुष्टि करने वाले,

(ग) अन्य विषय संबंधी जबकि उच्च न्यायालय यह प्रमाणपत्र दे दे कि वे उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक हैं।]

यह मूल संशोधन था जिसके आधार पर अनुच्छेद 110 के अधीन बहुत समय चर्चा हुई और उस समय प्रश्न उपस्थित था कि 'इस संविधान के निर्वचन के संबंध में' शब्दों को निकाला जाये या नहीं। उसके बाद इस सदन में यह कहा गया था कि यदि इस संशोधन को स्वीकार कर लिया गया और मृत्युदंडादेश की अपील उपबन्धित कर दी गई तो उच्चतम न्यायालय पर बहुत अधिक कार्य हो जायेगा। इसके बाद मृत्यु दंडादेश की अपील के अधिकार को छीनने के संशोधन आने लगे और इसके पश्चात् पासा पलट गया और संशोधन के क्षेत्र को बहुत अधिक संकुचित कर दिया गया। अन्त में नये संशोधन भेजे गये जिनमें यह प्रयास किया गया था कि अभियोगों की संख्या कम करके 50 या 60 तक के लगभग रखी जाये। अब सदन का यह विचार है कि कम से कम उन मामलों की अपील की व्यवस्था इस संविधान में की जानी चाहिये जिनमें उच्च न्यायालय ने अपने अपीलीय अथवा मूल क्षेत्राधिकार में सर्वप्रथम मृत्यु दंडादेश दिया हो।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** यह कौन सा संशोधन है जिसे आप पेश कर रहे हैं?

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** पंचम सप्ताह की सूची 1 का संशोधन संख्या 15।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूं कि एक ही विषय संबंधी बहुत से संशोधन हैं? अत: सब संशोधनों को पहले औपचारिक रूप में पेश किया जाये और उसके बाद उन पर साधारण चर्चा आरम्भ हो। ऐसा करना अधिक सुविधाजनक होगा।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** मैं भी यह चाहूंगा कि सब संशोधन 14 से लेकर 41 तक शीघ्र ही इस सदन के समक्ष रख दिये जायें।

***अध्यक्ष:** उस दिन इस विषय पर हमने सदस्य के कुछ समझौता करने के लिये चर्चा स्थगित कर दी थी। परन्तु दुर्भाग्यवश अब तक समझौता न हो सका। अत: केवल यही सूरत रह गई है कि सब संशोधनों को एक साथ लिया जाये और उन पर मत लिया जाये और इसका फल यही होगा कि वह एक ऐसी वस्तु होगी जिसे कोई नहीं चाहेगा।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** श्रीमान्, डा. अम्बेडकर का संशोधन पेश होने दिया जाये और उसके बाद अन्य संशोधनों को पेश होने दिया जाये। यदि ऐसा होगा तो हम डा. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 24 पर ध्यान संकेन्द्रित कर सकेंगे।

***अध्यक्ष:** फिर भी अन्य संशोधन तो पेश किये ही जायेंगे जब तक कि सदस्य उन्हें न पेश करने की इच्छा प्रकट न करें।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** वे डा. अम्बेडकर के संशोधन पर भाषण दे सकते हैं जिससे ध्यान उस ओर संकेद्रित हो अपेक्षाकृत इसके कि प्रत्येक सदस्य केवल अपने ही संशोधन पर बोले। उनको बोलने से न रोका जाये। सब संशोधन पेश होने दिये जायें और वे सब बोलें।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): क्या मैं यह कह सकता हूं कि यदि श्री कृष्णास्वामी भारती द्वारा दिये गये सुझाव का हम पालन करें तो बड़ी सुविधा होगी? उसके द्वारा दांडिक क्षेत्राधिकार के साधारण प्रश्न पर चर्चा हो सकेगी। इसके साथ-साथ यदि किसी खास मामले में कोई सदस्य यह चाहे कि दंड-क्षेत्राधिकार को अभी उपबन्धित किया जाये तो उसकी बाद में चर्चा हो सकती है और उससे डा. अम्बेडकर के इस संशोधन का विरोध नहीं होगा कि उच्चतम न्यायालय को दंड-क्षेत्राधिकार सौंपने की शक्ति संसद को दी जायेगी। संक्षेप में इस प्रश्न की चर्चा की जा सकती है कि भविष्य में संसद को यह शक्ति सौंपनी चाहिये या नहीं। यदि यहां अभी हम कुछ विशिष्ट शक्तियां चाहते हैं तो उस पर डा. अम्बेडकर के संशोधन के साधारण विषय से पृथक रूप में बाद में विचार किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** तो फिर मैं सब संशोधनों को पेश करने के लिये कहूंगा और उसके बाद साधारण चर्चा होगी। पंडित भार्गव औपचारिक रूप में अपने सब संशोधनों को पेश कर सकते हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** वे बहुत अधिक हैं और इस विषय के विभिन्न पहलुओं से संबंध रखते हैं। खैर, मैं उन्हें पेश करता हूं।

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1927 के स्थान में निम्न रखा जाये:

''कि निम्न अनुच्छेद को नवीन अनुच्छेद 112-ख के रूप में प्रविष्ट किया जाये;

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

112-B. An appeal shall lie in the following cases to the Supreme Court in the exercise of its criminal jurisdiction:

(a) convicting accused persons as a result of acceptance of appeals against their acquittal,

(b) sentencing to or confirming the sentence of death or transportation for life,

(c) in respect of other matters when the High Court grants a certificate that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.'

[112-ख. निम्न मामलों की अपील उच्चतम न्यायालय में उसके दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग

(क) अभियुक्त व्यक्तियों को उनकी विमुक्ति के विरुद्ध अपील की स्वीकृति के फलस्वरूप दोष सिद्ध करने वाले,

(ख) मृत्यु दंडादेश देने अथवा आजन्म निर्वासन करने वाले अथवा इनकी सम्पुष्टि करने वाले,

(ग) अन्य विषय संबंधी जबकि उच्च न्यायालय यह प्रमाणपत्र दे दे कि वे उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

''कि संशोधन संख्या 1927 और 1923 के निर्देश से अनुच्छेद 111 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

'111-A. An appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction in the following cases:

(a) When the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.

(b) When the High Court convicts any person as a result of acceptance of appeal by the Government against his acquittal and sentences him to more than five years' imprisonment or ten thousand rupees fine, or when the High Court enhances the sentence awarded by the lower court by more than five years' imprisonment or ten thousand rupees fine.

(c) When the High Court sentences to or confirms the sentence of death and the judges of the High Court are not unanimous in their findings of fact or law.'

[111-क. भारत राज्य क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी निर्णय की निम्न अभियोगों में अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(क) जब उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।

(ख) जब उच्च न्यायालय किसी व्यक्ति पर उसकी विमुक्ति के विरुद्ध सरकार द्वारा की गई अपील की स्वीकृति के फलस्वरूप दोष सिद्ध करता है और उसको पांच वर्ष से अधिक के कारावास का अथवा दस हजार रुपया जुर्माने का दंडादेश देता है या जब उच्च न्यायालय अवर न्यायालय द्वारा दिये गये दंडादेश को बढ़ाकर पांच वर्ष से अधिक के कारावास अथवा दस हजार रुपया जुर्माने में कर देता है।

(ग) जब उच्च न्यायालय मृत्युदंड का दंडादेश देता है अथवा उसकी सम्पुष्टि करता है और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश तथ्य अथवा विधि के निर्णय पर एकमत नहीं है।]

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 16 (चतुर्थ सप्ताह) में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के स्थान में निम्न रखा जाये:

'111-A. (1) An appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction—

(a) if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal;

(b) if the High Court sentences any person to death on appeal from an order of acquittal or in its revisional powers of enhancement or in the exercise of its original jurisdiction;

(2) The Parliament may by law confer on the Supreme Court further powers to entertain and hear appeals from any judgment or sentence or final order of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction subject to such conditions and limitations as may be specified in such law.'

[111-क. (1) भारत राज्य क्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी निर्णय की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी—

(क) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला अपील किये जाने लायक है;

(ख) यदि उच्च न्यायालय विमुक्ति के आदेश की अपील में अथवा दंडादेश बढ़ाने की अपनी पुनरीक्षणीय शक्तियों से अथवा अपने मूल क्षेत्राधिकार के प्रयोग में किसी व्यक्ति को मृत्यु का दंडादेश देता है;

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

(2) संसद विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को भारत राज्य के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी निर्णय अथवा दंडादेश अथवा अन्तिम आदेश की, उन शर्तों और परिसीमाओं के अधीन जो उस विधि में उल्लिखित हों, अपील स्वीकार करने और सुनने की और भी अधिक शक्तियां प्रदान करेगी।]

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 16 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 111 के खंड (ख) में से 'and sentences him to more than five years' imprisonment or ten thousand rupees fine' (और उसको पांच वर्ष से अधिक के कारावास का अथवा दस हजार रुपये जुर्माने का दंडादेश देता है) शब्दों को अपमार्जित किया जाये और 'by more than five years' imprisonment or ten thousand rupees fine' (पांच वर्ष से अधिक के कारावास अथवा दस हजार रुपया जुर्माने में कर देता है) शब्दों के स्थान में 'and sentences the person so convicted or whose sentence is so enhanced to death' (इस प्रकार दोष-सिद्ध व्यक्ति को दंडादेश देता है अथवा जिसका दंडादेश इस प्रकार बढ़ाकर मृत्युदंड में कर दिया जाता है) शब्द रखे जायें।

''कि संशोधन संख्या 1927 और 1923 के निर्देश से अनुच्छेद 111 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद रखा जाये:

'111-A. An appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction in the following cases:

(a) When the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.

(b) When the High Court convicts any person as a result of acceptance of appeal by the Government against his acquittal and sentences him to more than five years' imprisonment or ten thousand rupees fine, or when the High Court enhances the sentence awarded by the lower court by more than five years' imprisonment or ten thousand rupees fine.'

[111-क. भारत राज्य क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी निर्णय की निम्न अभियोगों में अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(क) जब उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।

(ख) जब उच्च न्यायालय किसी व्यक्ति पर उसकी विमुक्ति के विरुद्ध सरकार द्वारा की गई अपील की स्वीकृति के फलस्वरूप दोष सिद्ध करता है और उसको पांच वर्ष से अधिक के कारावास का अथवा दस हजार रुपया जुर्माने का दंडादेश देता है या जब उच्च न्यायालय अवर न्यायालय द्वारा दिये गये दंडादेश को बढ़ाकर पांच वर्ष से अधिक के कारावास अथवा दस हजार रुपया जुर्माने में कर देता है।

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 19 में निम्न खंड, खंड (ग) के रूप में प्रविष्ट किया जाये:

'(c) When the High Court sentences to or confirms the sentence of death.'

[(ग) जब उच्च न्यायालय मृत्यु दंड का दंडादेश देता है अथवा उसकी संपुष्टि करता है।]

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 20 में निम्न शब्दों को प्रस्तावित खंड (ग) के अन्त में प्रविष्ट किया जाये:

'or transportation for life.'

(हिन्दी रूपान्तर में मृत्युदंड के पश्चात् 'आजन्म कारावास'।)

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के खंड (1) के उपखंड (ख) में–

(1) 'acquittal' (विमुक्ति) शब्द के पश्चात् 'or enhancement' (अथवा परिवृद्धि) शब्द, और

(2) 'original' (मूल) शब्द के पश्चात् 'appellate or revisional' (पुनरीक्षणीय अथवा अपीलीय) शब्द प्रविष्ट किये जायें।

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 में प्रस्थापित नये अनुचछेद 111-क के खंड (1) के उपखंड (2) के पश्चात् निम्न नवीन उपखंड प्रविष्ट किया जाये:

'(c) if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supremem Court.' ''

[(ग) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 24 में प्रस्थापित अनुच्छेद 112-ख के स्थान में निम्न रखा जाये:

'112-B. (1) An Appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction in the following cases:

(a) When the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

(b) When the High Court convicts any person as a result of acceptance of appeal by the Government against his acquittal or when the High Court enhances the sentence awarded by the lower court.

(c) When the High Court sentences to or confirms the sentence of death and the judges of the High Court are not unanimous in their findings of fact or law.' ''

(2) Parliament may by law confer on the Supreme Court further powers to entertain and hear appeals from any judgment or sentence or final order of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction subject to such conditions and limitations as may be specified in such law.' ''

[112-ख. भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी निर्णय की निम्न अभियोगों में अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(क) जब उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।

(ख) जब उच्च न्यायालय किसी व्यक्ति पर उसकी विमुक्ति के विरुद्ध सरकार द्वारा की गई अपील की स्वीकृति के फलस्वरूप दोष सिद्ध करता है अथवा जब उच्च न्यायालय अधीन न्यायालय द्वारा दिये हुये दंडादेश को बढ़ाता है।

(ग) जब उच्च न्यायालय मृत्युदंड का दंडादेश देता है अथवा उसकी सम्पुष्टि करता है और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश तथ्य अथवा विधि के निर्णय पर एकमत नहीं है।

(2) संसद विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को भारत राज्य के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी निर्णय अथवा अन्तिम आदेश की, उन शर्तों और परिसीमाओं के अधीन जो उस विधि में उल्लिखित हों, अपील स्वीकार करने और सुनने की और भी अधिक शक्तियां प्रदान करेगी।]

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 34 में प्रस्थापित नये अनुचछेद 112-ख के खंड (1) के उपखंड (ख) में 'acquittal' (हिंदी रूपांतर में 'सिद्ध करता है') शब्द के पश्चात् 'and sentences him to a period of more than 5 years' imprisonment or to a fine of Rs. 10,000' (और उसे पांच वर्ष से अधिक कारावास का अथवा 10,000 रुपया जुर्माने का दंडादेश देता है) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 34 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 112-ख के खंड (1) के उपखंड (ख) के अन्त में शब्द निम्न प्रविष्ट किये जायें:

'by more than 5 years' imprisonment or Rs. 10,000 fine' ''

[5 वर्ष से अधिक का कारावास अथवा 10,000 रुपया जुर्माना।]

इसके बाद, श्रीमान्, कोई 15 मिनट पूर्व मैंने एक और संशोधन की सूचना दी है।

***अध्यक्ष:** वह कौन सा है?

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 14 से 41 तक के निर्देश से निम्न अनुच्छेद को अनुच्छेद 111-क के रूप में रखा जाये:

'111-A. (1) An appeal shall lie to the Supreme Court from a judgment or final order in a criminal proceeding of a High Court in the territory of India if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal.

(2) The Supreme Court shall have appellate criminal jurisdiction to hear appeals from any judgment, sentencee or final order of a High Court or such other court as may be prescribed by law by the Parliament subject to such conditions and limitations as may be prescribed by such law.'

[111-क. (1) भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के किसी दंड-कार्यवाही में दिये हुये निर्णय या अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।

(2) उच्चतम न्यायालय को किसी उच्च न्यायालय अथवा ऐसे किसी अन्य न्यायालय के, जो संसद की विधि द्वारा उन शर्त्त और परिसीमाओं के अधीन जो उस विधि में विनिहित हैं विनिहित की गई हो, किसी निर्णय, दंडादेश अथवा अन्तिम आदेश की अपील सुनने का अपीलीय क्षेत्राधिकार होगा।]

अत: श्रीमान्, मैं निवेदन करूंगा कि इन संशोधनों का क्षेत्र उन मामलों में भी अपील की व्यवस्था करने से लेकर जिनमें प्रारम्भ में पांच वर्ष अथवा उससे अधिक का दंड दिया गया हो इस अन्तिम संशोधन तक है जिसको मैंने अभी पेश किया है कि केवल उन मामलों की, जिनमें उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है, अन्य मामलों के साथ, जिनके लिये संसद उच्चतम न्यायालय को अपील स्वीकार करने और सुनने का विधि द्वारा क्षेत्राधिकार देती है, उच्चतम न्यायालय में अपील होगी। श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि जिस रूप में मैं विधि के सिद्धांत को समझता हूं उसके अनुसार यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि उच्चतम न्यायालय के संपूर्ण क्षेत्र को निर्बन्धित कर दिया गया है। मैं यह मानता हूं कि जहां तक उच्च न्यायालयों का संबंध है किसी विशिष्ट राज्यों की जनता की संपत्ति और जीवन के संबंध में उनके शब्द अन्तिम हैं। इस बात को मैं समझ सकता हूं।

***अध्यक्षः** साधारण चर्चा के समय आप बोल सकते हैं।

***श्री जसपतराय कपूरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 16 और 19 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'111-A. An appeal shall lie to the Supreme Court from a final order of High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction–

(a) if by such final order any person has been sentenced to death for the first time in the case; or

(b) if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[111-क. भारत राज्य-क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में दिये हुये अन्तिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(क) यदि उस अन्तिम आदेश द्वारा कि व्यक्ति को उस मामले में प्रथम बार मृत्युदंड दिया गया है; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि संशोधन संख्या 23 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाये।

'कि नये अनुच्छेद 112-क के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

'112-B. Conferment on the Supreme Court of Appeallate jurisdiction with regard to criminal matters—Parliament may by law confer on the Supreme Court power to entertain and hear appeals from any judgement, final order or sentence of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction subject to such conditions and limitations as may be specified in such law.

[112-ख. दंड विषयों में उच्चतम न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार—संसद विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को भारत राज्य के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी निर्णय अथवा अन्तिम आदेश अथवा दंडादेश की, उन शर्तों और परिसीमाओं के अधीन जो उस विधि में उल्लिखित हों, अपील स्वीकार करने और सुनने की शक्तियां प्रदान करेगी।]

***अध्यक्षः** क्या 112-क कोई अनुच्छेद है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** 112-क इस सदन द्वारा पहले ही पारित हो चुका है।

***श्री एच.वी. पातस्करः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'कि अनुच्छेद 112-क के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद रखा जाये:

'112-B. The Supreme Court shall with such exceptions and subject to such regulations as may be prescribed by law of the Parliament have appellate jurisdiction to hear appeals from any judgment, final order or sentence of a High Court or such other Court as may be prescribed by law of the Parliament in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction.' ''

[112-ख. उच्चतम न्यायालय को उन अपवादों के सहित तथा उन विनियमों के अधीन जो संसद की विधि द्वारा विनिहित किये गये हो भारत राज्य क्षेत्र में की किसी उच्च न्यायालय अथवा ऐसे अन्य न्यायालय के, जो संसद की विधि द्वारा विनिहित की गई हो, अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी निर्णय, अन्तिम आदेश अथवा दंडादेश की अपील सुनने का अपीलीय क्षेत्राधिकार होगा।]

***डा. बक्शी टेकचन्द** (पूर्वी पंजाब : जनरल): मेरे नाम से तीन संशोधन हैं। पहला संशोधन संख्या 26 है, दूसरा 27 है और तीसरा संशोधन पर संशोधन है जिसकी सूचना मैंने सचिव को आज प्रातःकाल ही दी है। आपकी अनुज्ञा से मैं तीनों संशोधनों को पेश करूंगा।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:

'(1) an appeal shall lie to the Supreme Court from a judgement or final order in a criminal proceeding of a High Court in the territory of India–

(a) if the High Court has, on appeal or revision, reversed the acquittal of an accused person and sentenced him to death; or

(b) if the High Court certifies that the case involved a substantial question of law or is otherwise a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[(1) भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के किसी दंड कार्यवाही में दिये हुए निर्णय या अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी:

[डा. बक्शी टेकचन्द]

(क) यदि अपील अथवा पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्ति की विमुक्ति को उलट दिया हो और उसको मृत्युदंड दिया हो; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामले में विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है या वह अन्यथा उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

इसके पश्चात् संशोधन संख्या 27 है जिसकी सूचना डा. पी.के. सेन, डा. पी.एस. देशमुख, श्री के.एम. मुंशी और मैंने दी है और वह इस प्रकार है:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:

'(1) An appeal shall lie to the Supreme Court from a judgement or final order in a criminal proceeding of a High Court in the territory of India:

(a) if the High Court has, on appeal or revision reversed the order of acquittal of an accused person and sentenced him to death, or has in any other case enhanced the sentence passed on an accused person and sentenced him to death; or

(b) if the High Court certifies that the case involves a substantial question of law or is otherwise a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[(1) भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के किसी दंड कार्यवाही में दिये हुए निर्णय या अन्तिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(क) यदि अपील अथवा पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्ति की विमुक्ति के आदेश को उलट दिया हो और उसको मृत्युदंड दिया हो या किसी अन्य मामले में किसी अभियुक्त व्यक्ति पर पारित दंडादेश को बढ़ा दिया हो और उसको मृत्युदंड दिया हो; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामले में विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है या वह अन्यथा उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

इसके पश्चात् तीसरा संशोधन है जिसकी सूचना मैंने आज प्रात:काल दी थी। उसका रूप अधिक विनीत है।

श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 23 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:

'An appeal shall lie to the Supreme Court from a judgement or an order in a criminal proceeding of a High Court in the territory of India:

(a) if the High Court has, on appeal, reversed the order of acquittal of an accused person and has sentenced him to death; or

(b) if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[भारत राज्य क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के किसी दंड कार्यवाही में दिये हुये निर्णय अथवा आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी:

(क) यदि अपील अथवा पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय ने अभियुक्त व्यक्ति की विमुक्ति के आदेश को उलट दिया हो और उसको मृत्युदंड दिया हो; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

श्रीमान्, मैं नहीं समझता हूं कि इस समय इस अन्तिम संशोधन के समर्थन में मैं भाषण दूं, पर बाद में जब साधारण चर्चा होगी उस समय मैं कुछ कहूंगा।

***श्री जसपतराय कपूर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन 23 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:

'(1) An appeal shall lie to the Supreme Court from an order of a High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction—

(a) if such order involves a sentence of death on any person and such order has been passed against him for the first time in the case of the High Court either in appeal or reversion from any order passed by High Court to any other Court; or

(b) if the HIgh Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[(1) भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी—

(क) यदि उस आदेश में किसी व्यक्ति का मृत्यु दंडादेश अन्तर्ग्रस्त है और वह आदेश उच्च न्यायालय द्वारा अपील में या किसी अन्य न्यायालय को उच्च न्यायालय द्वारा पारित किये गये किसी आदेश के पुनरीक्षण में उस व्यक्ति के विरुद्ध पहली बार उस मामले में पारित किया गया है; अथवा

[श्री जसपतराय कपूर]

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

***अध्यक्ष:** क्या आप इसके विकल्प को पेश नहीं कर रहे हैं?

***श्री जसपतराय कपूर:** श्रीमान्, मैं इसके विकल्प को पेश करता हूं, पर उसके पढ़ने की मुझे आवश्यकता नहीं है। यह समझ लेना चाहिये कि वह पढ़ दिया गया।

''(1) An appeal shall lie to the Supreme Court from an order of a High Court in the territory of India in the exercise of its criminal jurisdiction—

(a) if the High Court either on appeal reversing the order of acquittal or in revision enhancing the sentence, or in a trial by itself under Chapter 44 of Criminal Procedure Code (Act V of 1898) has sentenced any person to death;

(b) or if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[(1) भारत राज्य-क्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी—

(क) यदि उच्च न्यायालय में अपील में विमुक्ति के आदेश को उलट कर अथवा पुनरीक्षण में दंडादेश को बढ़ाकर अथवा दंड प्रक्रिया संहिता (1898 के भाग 5) के अध्याय 44 के अधीन स्वयं अपनी जांच में किसी व्यक्ति को मृत्युदंडादेश दिया हो।

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

***काजी सैयद करीमुद्दीन** (मध्यप्रांत और बरार : मुस्लिम): क्या मेरे संशोधन संख्या 29 का पढ़ा जाना आवश्यक है क्योंकि संशोधन संख्या 28 और 29 एक से हैं?

***अध्यक्ष:** कोई आवश्यक नहीं है।

***काजी सैयद करीमुद्दीन:** मैं उसे औपचारिक रूप में पेश करूंगा। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 111-क के खंड (1) के स्थान में निम्न खंड रखा जाये:

'(1) An appeal shall lie to the Supreme Court from an order of a High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction—

(a) if such order involves a sentence of death on any person and such order has been passed against him for the first time in the case by the High Court either in appeal or revision from any order passed by the High Court to any other Court; or

(b) if the HIgh Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[(1) भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी–

(क) यदि उस आदेश में किसी व्यक्ति का मृत्यु दंडादेश अन्तर्ग्रस्त है और वह आदेश उच्च न्यायालय द्वारा या तो अपील में या किसी अन्य न्यायालय को उच्च न्यायालय द्वारा पारित किये गये किसी आदेश के पुनरीक्षण में उस व्यक्ति के विरुद्ध पहली बार उस मामले में पारित किया गया हो; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

(संशोधन संख्या 32 पेश नहीं किया गया।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 23 के निर्देश से अनुच्छेद 111 के पश्चात् निम्न अनुच्छेद 111-क प्रविष्ट किया जाये:

'111-A. (1) An appeal shall lie to the Supreme Court from a judgement or final order in any criminal proceeding in a High Court in the territory of India or in any criminal proceeding in any tribunal in the said territory from which no appeal, revision or other proceeding lies to the High Court—

(a) against any sentence of death passed or confirmed by the High Court in appeal or revision, or passed by such tribunal; or

(b) if the High Court or the tribunal certifies that the case involves a substantial question of law or that it is otherwise a fit case for appeal to the Supreme Court.

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

(2) Parliament may by law confer on the Supreme Court any further powers to entertain and hear appeal from any judgment or final order of a High Court or other tribunal in the exercise of its criminal jurisdiction subject to such conditions and limitations as may be specified in such law.' ''

[111-क. (1) भारत राज्य-क्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के किसी दंड कार्यवाही में दिये हुये निर्णय अथवा अन्तिम आदेश की अथवा उक्त राज्यक्षेत्र के किसी न्यायाधिकरण के किसी दंड कार्यवाही में दिये हुये निर्णय अथवा अन्तिम आदेश की जिसके संबंध में उच्च न्यायालय में अपील पुनरीक्षण अथवा अन्य कार्यवाही नहीं होती है, अपील उच्चतम न्यायालय में होगी—

(क) अपील अथवा पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय द्वारा पारित अथवा संपुष्ट या उस न्यायाधिकरण द्वारा पारित किसी मृत्यु दंडादेश की, अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण प्रमाणित करता है कि मामले में विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है अथवा अन्यथा मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।

(2) संसद विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को किसी उच्च न्यायालय अथवा अन्य न्यायाधिकरण के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी निर्णय अथवा अन्तिम आदेश की, उन शर्तों और परिसीमाओं के अधीन जो उस विधि में उल्लिखित हों, अपील स्वीकार करने और सुनने की शक्तियां प्रदान करेगी।]

***श्री जसपतराय कपूर:** श्रीमान, संशोधन संख्या 37 के स्थान में मैं एक और संशोधन पेश करना चाहूंगा जिसकी मैंने आज प्रात:काल सूचना दी है। उसमें संशोधन संख्या 37 के स्थान में इस संशोधन को रखने का प्रयास किया गया है। जो इस प्रकार है:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 24 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 112-ख में 'Parliament may' शब्दों के स्थान पर 'Parliament shall within a year of the commencement of this Constitution' (इस संशोधन के प्रारम्भ होने से एक वर्ष के अन्तर्गत संसद) शब्द रखे जायें।''

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 38 भी आपके नाम से है।

***श्री जसपतराय कपूर:** उसे मैं पेश नहीं कर रहा हूं, श्रीमान्।

मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 24 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 112-ख में निम्न नवीन परन्तुक जोड़ दिये जायें:

'Provided, however, that an appeal shall lie to the Supreme Court from a *final order* of a High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction—

(a) if *by such final order* any person has been sentenced to death for the *first time* in the case; or

(b) if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[परन्तु भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी—

(क) यदि उस अन्तिम आदेश में किसी व्यक्ति को उस मामले में पहली बार मृत्यु दंडादेश दिया गया है; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

इसके पश्चात्, श्रीमान्, तीन विकल्प हैं:

''Provided, however, that an appeal shall lie to the Supreme Court from a *final order* of a High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction, if *by such final order* any person has been sentenced to death *for the first time* in the case;"

or, alternatively,

''Provided, however, that an appeal shall lie to the Supreme Court from a *final order* of a High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction, *if by such final order* any person has been sentenced to death in reversal of the order of acquittal.''

or, alternatively,

''Provided, however, that an appeal shall lie to the Supreme Court for a *final order* of a High Court in the territory of India made in the exercise of

[श्री जसपतराय कपूर]

its criminal jurisdiction, if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.''

[''परन्तु भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी यदि उस अन्तिम आदेश में किसी व्यक्ति को उस मामले में पहली बार मृत्यु दंडादेश दिया है।''

अथवा इसके विकल्प में,

[''परन्तु भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी यदि उस अन्तिम आदेश में विमुक्ति के आदेश को उलटकर किसी व्यक्ति को मृत्यु दंडादेश दिया है।''

अथवा इसके विकल्प में,

[''परन्तु भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

***काजी सैयद करीमुद्दीनः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि उपरोक्त संशोधन संख्या 24 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 112-ख में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided, however, that an appeal shall lie to the Supreme Court from a *final order* of a High Court in the territory of India made in the exercise of its criminal jurisdiction—

(a) if *by such final order* any person has been sentenced to death for the *first time* in the case; or

(b) if the High Court certifies that the case is a fit one for appeal to the Supreme Court.' ''

[परन्तु भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग संबंधी किसी अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी—

(क) यदि उस अन्तिम आदेश में किसी व्यक्ति को उस मामले में पहली बार मृत्यु दंडादेश दिया गया है; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।]

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, आपकी अनुज्ञा से, मैं अनुच्छेद 112-क को अनुच्छेद 111-क के रूप में पुर:स्थापन करने वाले प्रथम सूची के संशोधन संख्या 41 को पेश करना चाहूंगा। मैं समझता हूं कि अनुच्छेद 112 के बाद में रखने के बदले में उसे अनुच्छेद 111 के पश्चात् प्रविष्ट किया जाये। परिवर्तन केवल विवरण के विषय में है। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1932 के निर्देश से अनुच्छेद 111 के पश्चात् निम्न नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

'111-A. Any person against whom any judgment, sentence or order has been passed by a High Court in the territory of India in any criminal proceeding or any proceeding relating to contempt of Court, or from any judgment, sentence or order of any other tribunal exercising criminal jurisdiction which judgment, sentence or order is not liable to be set aside or modified in appeal or revision by any such High Court shall have a right of appeal in the following case, namely—

(a) against any sentence of death;

(b) against any other judgment, sentence or order of such High Court or tribunal as the case may be, where the judgment, sentence or order involves a substantial question of law; or

(c) in any other case where the High Court or the tribunal as the case may be, certifies that it is a fit case for appeal.' ''

[111-क. किसी व्यक्ति को, जिसके विरुद्ध भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय द्वारा किसी दंड कार्यवाही में अथवा न्यायालय अवमान संबंधी किसी कार्यवाही में कोई निर्णय, दंडादेश अथवा आदेश पारित किया गया है उसकी या दांडिक क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाले किसी अन्य न्यायाधिकरण के निर्णय, दंडादेश अथवा आदेश की, जिसको अपील अथवा पुनरीक्षण में किसी ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा रद्द अथवा जिसमें रूपभेद नहीं किया जा सकता है, निम्न मामलों में अपील करने का अधिकार होगा:

(क) किसी मृत्यु दंडादेश के विरुद्ध;

(ख) उस उच्च न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण के, जैसी भी स्थिति हो, किसी अन्य निर्णय, दंडादेश अथवा आदेश के विरुद्ध जिस निर्णय, दंडादेश अथवा आदेश में विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है; अथवा

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

(ग) किसी अन्य मामले में जिसके लिये उच्च न्यायालय अथवा न्यायाधिकरण, जैसी भी स्थिति हो, प्रमाणित करता है कि मामला अपील किये जाने लायक है।]

***अध्यक्ष:** एक संशोधन है जिसकी सूचना मुझे प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना से प्राप्त हुई है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** कौनसा श्रीमान्?

***अध्यक्ष:** आपने इस संशोधन की सूचना दी है:

''निम्न अनुच्छेद को 111-क के स्थान में रखा जाये:

'भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के किसी दंड कार्यवाही में दिये हुये निर्णय अथवा अन्तिम आदेश की उच्चतम न्यायालय में अपील होगी यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला अपील किये जाने लायक है.....' ''

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** यह वह है जिसको आपकी अनुज्ञा से मैं पेश कर चुका हूं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** वह पेश हो चुका है।

***अध्यक्ष:** तो मैं समझता हूं कि संशोधन इतने ही हैं। विभिन्न अनुच्छेदों पर कुछ और संशोधन हैं और मैं समझता हूं कि जो संशोधन पेश हो चुके हैं वे सब इनमें आ जाते हैं और मैं छपी हुई सूची के किसी भी संशोधन को नहीं लेता हूं। अब सब संशोधन पेश हो चुके हैं और समूचे प्रश्न पर चर्चा की जा सकती है। मैं समझता हूं कि संशोधन की इस बाढ़ में से हमें कुछ न कुछ मिल ही जायेगा।

***श्री जैड.एच. लारी** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, सदन के समक्ष कदाचित एक महत्त्वपूर्ण विषय है। यह आवश्यक है कि जो विभिन्न संशोधन पेश किये गये हैं उन पर सदन बहुत ध्यान देकर विचार करे। प्रश्न यह है कि क्या दांडिक मामलों की उच्चतम न्यायालय में अपील करने का अधिकार होना चाहिए या नहीं, और यदि हो तो किन परिस्थितियों में?

मैं समझता हूं कि बहुमत इस पक्ष में है कि कुछ मामलों में अपील की शक्ति उच्चतम न्यायालय को होनी चाहिए। यहां तक कि डा. अम्बेडकर ने संशोधन संख्या 24 पेश किया है जिसमें कहा गया है कि संसद दांडिक मामलों की अपील के लिए उपबन्ध बनायेगी। अन्य संशोधन, जो पेश किये गए हैं, वे कुछ और आगे बढ़ते हैं और कहते हैं कि कुछ उल्लिखित मामलों में संविधान में भी अपील के लिये उपबन्ध होने चाहिये और हमारे सामने यही वास्तविक प्रश्न है कि क्या इस विषय को पूर्णतया संसद पर छोड़ा जाये या क्या स्वयं संविधान में कुछ मामलों की अपील के लिये उपबन्ध रखे जायें। सदन के समक्ष यह पहला प्रश्न है।

दूसरा प्रश्न यह है: यदि सदन इस सिद्धांत को स्वीकार कर लेता है कि दांडिक मामलों की अपील के लिये इस संविधान में व्यवस्था होनी चाहिये तो वे कौन से मामले हैं जिनकी अपील होगी? यदि हम विभिन्न संशोधनों का विश्लेषण करें तो हमें विदित

होता है कि सब संशोधन सर्वप्रथम यह सुझाव देते हैं कि जिन मामलों में स्वयं उच्चतम न्यायालय को यह संतोष हो जाता है कि अपील होनी चाहिये तो उनकी अपील होगी। जब इस सदन में व्यवहार विषयक मामलों के उपबन्धों पर चर्चा हो रही थी उस समय डा. अम्बेडकर ने यह बिल्कुल ठीक कहा था कि उच्च न्यायालय को यह कहने का नैसर्गिक अधिकार है कि कोई मामला अपील किये जाने लायक है या नहीं और यदि इस प्रभाव का कोई प्रमाणपत्र है तो व्यवहार विषयक अपील होने दी जायेगी। मेरा निवेदन है कि यही सिद्धान्त उतने ही बलपूर्वक दांडिक अपीलों पर लागू होता है। यदि उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित की गई कोई अपील है और स्वयं उच्च न्यायालय का यह विचार है कि मामला अपील किये जाने लायक है तो क्यों कर उस अपील को न होने दिया जाये, इसके विरुद्ध कोई तर्क नहीं है। इस विषय पर मैं समझता हूं कि दो राय नहीं हो सकती हैं कि स्वयं संविधान में उन मामलों की अपील की व्यवस्था की जाये जिन के लिये उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला अपील किये जाने लायक है। यह उन उपबन्धों में से एक उपबन्ध है जिसके प्रविष्ट करने का कुछ संशोधनों द्वारा प्रयास किया गया है। मेरी खुद की यह राय है कि ऐसा उपबन्ध होना चाहिये।

दूसरा सुझाव यह है कि अधिकार के रूप में, यदि मामले में विधि का सारवत् प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है तो अपील होगी। यह स्पष्ट है कि इस सुझाव में भी बहुत बल है। परन्तु अभी यह कहा जा सकता है कि हम यह नहीं जानते कि ऐसे उपबन्ध की जो अपीलें प्रस्तुत की जायेंगी उनकी संख्या पर क्या प्रभाव पड़ेगा? अत: मैं स्वयं यह सोचता हूं कि इस प्रश्न को हम संसद पर छोड़ दें।

तीसरा सुझाव यह है कि जहां उच्च न्यायालय द्वारा पहली बार मृत्यु दंडादेश पारित किया है उसकी अधिकार के रूप में, अपील करने का अधिकार होना चाहिये। मैं समझता हूं कि यह बड़ा ही युक्तियुक्त सुझाव है। व्यवहार-विषयक मामलों में हमने अनेक अपीलों की व्यवस्था की है; और यह स्वाभाविक है कि यहां कम से कम एक अपील तो हो। यदि एक न्यायालय अभियुक्त को विमुक्त करता है और अपील में उच्च न्यायालय जांच को उलट देता है और उसको मृत्युदंडादेश देता है तो मैं समझता हूं कि विवेक यह चाहता है कि अभियुक्त को उच्चतम न्यायालय में अपील करने का अधिकार देना चाहिये। कम से कम एक न्यायालय ने उसे निरपराध पाया है। दो न्यायाधीशों में निर्णय की त्रुटि हो सकती है मैं आपको बहुत से दृष्टान्त दे सकता हूं जिनमें सरकार ने अपील की है और दोनों माननीय न्यायाधीश इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि वास्तव में वह व्यक्ति अपराधी है। यह दूसरा मामला है जिसके लिये मैं समझता हूं कि अपील का उपबन्ध अधिकार के रूप में होना चाहिये।

अन्त में संशोधन में यह सुझाव दिया गया है कि उन मामलों की भी अपील का अधिकार हमें देना चाहिये जिनमें अभियुक्त पर प्रथम बार पांच वर्ष से अधिक का दंडादेश आरोपित किया गया है। इस संशोधन के पक्ष में भी बहुत कुछ कहा जा सकता है। परन्तु मेरा निजी विचार यह है कि यदि वह अन्य खंड बना रहता है कि संसद अन्य अपीलों के लिये उपबन्ध बना सकती है तो उसके लिये हम प्रतीक्षा कर सकते हैं।

[श्री जैड.एच. लारी]

अत: मैं समझता हूं कि इस संविधान में तीन बातों की व्यवस्था होनी चाहिये। सर्वप्रथम उन मामलों में जिनका विनिश्चय करते हुये उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला अपील किये जाने लायक है, अधिकार रूप में उन मामलों की अपील होनी चाहिये; दूसरे, एक ऐसा प्रावधान होना चाहिये जिसके द्वारा अपील या पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय द्वारा पहली बार पारित किये गये मृत्यु दंडादेश की अपील का अधिकार हो; तीसरे, संसद को अन्य मामलों की अपील के लिये उपबन्ध बनाने का अधिकार होगा। यदि डा. अम्बेडकर का संशोधन संख्या 24 श्री जसपतराय कपूर द्वारा पेश किये गये संशोधन संख्या 39 तथा श्री करीमुद्दीन द्वारा पेश किये गये वैसे ही संशोधन संख्या 40 और डा. बक्शी टेकचन्द द्वारा पेश किये गये अन्तिम संशोधन के साथ-साथ स्वीकार किया जाता है तो मैं समझता हूं कि जनता संतुष्ट हो जायेगी और संविधान में दंड सम्बन्धी अपीलों के लिये काफी प्रावधान हो जायेंगे। मैं स्वयं यह समझता हूं कि इन दो मामलों में, जिनमें उच्च न्यायालय द्वारा सर्वप्रथम मृत्यु दंडादेश दिया जाता है और जिनमें उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला अपील किये जाने लायक है, अपील होने दी जाये, इस बात में कोई सन्देह नहीं हो सकता है। जो लोग दंड विषयक अपीलों को संसद पर छोड़ना चाहते हैं उन लोगों का तर्क यह है कि इस विषय पर विवरण पूर्वक चर्चा अपेक्षित है तथा यह सदन इस स्थिति में नहीं है कि उन मामलों की पूर्णतया संगणना कर सके जिनकी उच्चतम न्यायालय में अपील होगी। इस तर्क में कुछ सार है, पर वह सार पूर्ण रूप में नहीं है। क्योंकि जिन मामलों की अपील की आवश्यकता या वांछनीयता तक में कोई संदेह नहीं हो सकता उसके लिये इस पक्ष का कोई तर्क नहीं है कि उनको क्योंकर संसद पर छोड़ा जाये कि वह बाद में अधिनियम पारित करे। मेरा निवेदन यह है कि जहां तक इन दो मामलों का सम्बन्ध है, जहां कि प्रथम बार उच्च न्यायालय द्वारा मृत्युदंडादेश दिया है और जहां किसी मामले को उच्च न्यायालय द्वारा लायक प्रमाणित कर दिया है तो इन मामलों की अपील होने देने में कोई सन्देह नहीं हो सकता है और ऐसी कोई बात नहीं है कि इन मामलों में संविधान चुप साध बैठे जब कि उसमें व्यवहार-विषयक मामलों के सम्बन्ध के उपबन्ध है। मेरा निवेदन यह है कि यह सदन मेरे माननीय मित्रगण सर्वश्री करीमुद्दीन, जसपतराय कपूर और बक्शी टेकचन्द द्वारा पेश किये गये तीनों संशोधनों और संशोधन संख्या 24 को स्वीकार करे।

***मि. तजम्मुल हुसैन:** अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि मुझे मेरे माननीय मित्र बक्शी टेकचन्द द्वारा पेश किये गये संशोधन का समर्थन करना चाहिये। वे दो काम कराना चाहते हैं। सर्वप्रथम वे कहते हैं कि यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्च न्यायालय में सुने जाने के लायक है तो उस मामले को वहां भेजा जाये। मैं इससे पूर्णतया सहमत हूं। जब स्वयं उच्च न्यायालय आदेश पारित करता है और उसकी यह राय है कि आदेश में परिवर्तन किया जा सकता है और उच्चतम न्यायालय उस आदेश में परिवर्तन कर सकता है तो वह आदेश उच्चतम न्यायालय को जाना चाहिए। इस विषय पर दो राय नहीं हो सकती हैं। दूसरी बात यह है कि उच्च न्यायालय आदेश को उलट देती है अर्थात् यदि सत्र न्यायालय द्वारा विमुक्ति पारित कर दी गई है और सरकार के अपील करने पर

उच्च न्यायालय ने मृत्युदंडादेश पारित किया है अथवा सत्र न्यायाधीश के पहले आदेश को उलट दिया है और अभियुक्त की अपराधी पाया है तो इस मामले में उच्चतम न्यायालय को अपील जानी चाहिये। मैं एक कदम और आगे बढ़ूंगा। मैं कहता हूं कि किसी भी मामले में जिसमें अधीन न्यायालय की विमुक्ति का आदेश हुआ है और उस आदेश को उच्च न्यायालय ने उलट दिया है तो उसकी अपील उच्चतम न्यायालय में हो सकती है। मेरा तर्क यह है कि आपके समक्ष दो विनिश्चय हैं, एक सत्र न्यायाधीश का जो जूरी की सहायता से मामले की जांच करता है। जूरी की यह राय है कि मामला विमुक्ति के लायक है और यदि न्यायाधीश सहमत हो जाता है तब तो मामला वहीं समाप्त हो जाता है। विमुक्ति की अपील नहीं हो सकती है। यह साधारण विधि है परन्तु यदि अपील की भी जायेगी तो स्वयं सरकार द्वारा वह होनी चाहिये न किसी व्यक्ति विशेष द्वारा। सरकार की ओर से कार्यकारी महाधिवक्ता ही एकमात्र ऐसा व्यक्ति है जो अपील कर सकता है। जब वह अपील ऊपर जाती है तो नि:सन्देह जूरी और न्यायाधीश ने एक होकर यह कहा है कि वह व्यक्ति अपराधी है। मेरी राय में जब आपके सामने दो राय हैं तो एक तीसरी अन्तिम राय और होनी चाहिये। अत: सब मामलों को, जिनमें विमुक्ति उलट दी गई है, उच्चतम न्यायालय में जाने देना चाहिये। विधि का एक सिद्धान्त है कि यदि एक बार किसी व्यक्ति को विमुक्त कर दिया जताा है तो उसी दोषारोप के लिये उस पर मामला नहीं चलना चाहिये। इंग्लैंड में आपको विमुक्ति के विरुद्ध अपील बहुत कम मिलेंगी। अत: मैं निवेदन करता हूं कि हत्या सम्बन्धी सब मामलों की, जिनमें दोनों विधि तथा तथ्य के प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हैं, उच्च न्यायालय से उच्चतम न्यायालय में अपील होनी चाहिये। हत्या के मामले बड़े महत्वपूर्ण मामले हैं और यदि अपील है तो इनका अन्तिम विनिश्चय उच्चतम न्यायालय द्वारा होना चाहिये।

मेरा तीसरा प्रश्न यह है कि उन सब मामलों को जिनमें विधि का महत्त्वपूर्ण प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है अथवा देश को विधि के किसी महत्त्वपूर्ण प्रश्न के विनिश्चय की आवश्यकता है, उच्चतम न्यायालय के पास भेजना चाहिये और मेरा अन्तिम प्रश्न यह है कि जब सत्र न्यायाधीश द्वारा कोई दंडादेश पारित किया जा चुका है और वह उच्च न्यायालय में जाता है और उच्च न्यायालय उसे बढ़ा देता है तो उसकी अपील उच्चतम न्यायालय में होनी देनी चाहिये। ऐसा हुआ है और एक मामले का मेरा अनुभव है कि चार अभियुक्तों में से प्रत्येक को दो वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश हुआ। तीन ने अपील की और एक ने नहीं की। उच्च न्यायालय ने उनसे इस बात का कारण पूछा कि उनका दंड क्यों न बढ़ाया जाये और वास्तव में दंडादेश बढ़ा दिया गया। उच्च न्यायालय ने उस व्यक्ति से भी जिसने अपील नहीं की थी कहा कि वह कारण बताये कि उसका दंड भी क्यों न बढ़ाया जाये और अन्त में सबके दंड को आजन्म निर्वासन में बढ़ा दिया गया। इस प्रकार के मामले में जिनमें सत्र न्यायाधीश द्वारा दंडादेश पारित किया जा चुका है और वह उच्च न्यायालय में जाता है जो दंड को बढ़ा देता है तो अभियुक्त को तीसरे न्यायालय में—भारत के उच्चतम न्यायालय में—अपील करने देना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं और मैं इन बातों को भी जोड़ना चाहता हूं कि इन बातों पर डा. अम्बेडकर विचार करें।

***श्री जसपतराय कपूर:** अध्यक्ष महोदय मैंने कई संशोधन पेश किये हैं, पर मैं अपने विचारों को केवल संशोधन संख्या 39 पर ही सीमित रखना चाहूंगा। जो इस प्रकार है:

''कि डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन संख्या 24 में प्रस्थापित नवीन अनुच्छेद 112-ख में निम्न नये परन्तुक जोड़ दिये जायें:

'परन्तु भारत राज्यक्षेत्र के किसी उच्च न्यायालय के अपने दांडिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग सम्बन्धी किसी अन्तिम आदेश की उच्च न्यायालय में अपील होगी—

(क) यदि उस अन्तिम आदेश में किसी व्यक्ति को उस मामले में पहली बार मृत्युदंडादेश दिया गया है; अथवा

(ख) यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है।' ''

श्रीमान्, उस दिन अनुच्छेद 110 पर विचार करते समय इस विषय की बड़ी देर तक विस्तृत चर्चा रही कि उच्चतम न्यायालय को दंड विषयक मामलों की अपील सुनने का अधिकार होना चाहिये या नहीं। वह चर्चा अनुच्छेद 110 की चर्चा से कुछ अधिक सुसंगत नहीं थी, पर इस पर कोई आपत्ति नहीं की गई और आपने भी उस चर्चा पर कोई आपत्ति नहीं की। यह स्पष्ट है कि इसका कारण यह था कि हममें से प्रत्येक ने यह अनुभव किया कि उस प्रश्न की चर्चा बहुत आवश्यक थी और अनुच्छेद 112-ख के आने के पूर्व, जिसको आज इस समय डा. अम्बेडकर ने पेश किया है, हम उस विषय पर प्रारम्भिक चर्चा कर लें जिससे कि कोई ऐसा हल निकल आये जिसमें उन अनेक दृष्टिकोणों का समावेश हो जो उस दिन रखे गये थे। जिस प्रयोजन के लिये उस चर्चा का उपक्रम किया गया था उसकी लाभदायक रूप में पूर्ति हुई और हमने देखा कि दूसरे दिन जब हम अनुच्छेद 112-ख पर आये तो हमें यह देख कर संतोष हुआ कि डा. अम्बेडकर ने एक संशोधन की सूचना दी है जो इस समय संशोधन संख्या 23 के रूप में है। केवल यही नही वरन् दूसरे दिन यह देख कर हम और भी अधिक प्रसन्न हुये कि श्री मुंशी ने भी एक और संशोधन की सूचना दी जो अब संशोधन संख्या 27 के रूप में प्रस्तुत है जिसके अनुसार डा. अम्बेडकर के नाम के संशोधन संख्या 23 के क्षेत्र का कुछ सीमा तक विस्तार किया गया है अर्थात् जब कि डा. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 23 में केवल उन मामलों में अपील का अधिकार दिया गया है जिनमें उच्च न्यायालय ने अपील में विमुक्ति के विरुद्ध मृत्युदंडादेश पारित किया है तो श्री मुंशी के संशोधन में इस क्षेत्र को और भी अधिक उन मामलों तक विस्तृत किया है जिनमें उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण तक में मृत्युदंडादेश पारित किया है।

दूसरे, श्री मुंशी के संशोधन में यह भी दिया गया है कि यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामले में विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है अथवा वह अन्यथा उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने लायक है तो उसकी अपील होगी।

परन्तु यकायक हम देखते हैं कि संशोधन संख्या 23 में जिस स्थिति को डा. अम्बेडकर ने ग्रहण किया था उसका वे परित्याग करना चाहते हैं और आरम्भ में जो स्थिति उन्होंने ग्रहण की थी कि सिवा उस विधान के अनुसार जिसको संसद पारित करेगी अन्य प्रकार

से उच्चतम न्यायालय में अपील नहीं होगी उस स्थिति पर फिर वापस चले गये हैं। श्रीमान्, उस दिन अनुच्छेद 110 के वाद-विवाद का उत्तर देते हुये डा. अम्बेडकर ने कहा था कि उनका दिमाग खुला हुआ है पर खाली नहीं है। मैं यह मानने के लिये तैयार हूं कि उनका दिमाग केवल खुला हुआ ही नहीं है वरन् ग्रहणशील है। मैं केवल यह चाहता हूं कि उनका दिमाग स्मरणशील भी होता। क्योंकि उन्होंने वाद-विवाद के समय अनेक सुझावों को ग्रहण किया और एक या दो दिन तक वे उनके दिमाग में भी रहे और जिन्होंने उनको संशोधन संख्या 23 की सूचना देने के लिये प्रेरित किया, पर ये सब सुझाव उनके दिमाग से दो दिन के पश्चात् गायब हो गये; अत: उनका दिमाग केवल खुला हुआ ही नहीं है वरन् बहुत अधिक खुला हुआ है और कुछ समय तक ही बातों को रख सकता है।

प्रस्थापित संशोधन 24 में यह सुझाव दिया गया है कि संसद विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को दंड विषयक अपीलीय शक्तियां सौंप सकती है। यह नहीं स्वीकार किया गया है कि संसद दंड विषयक मामलों में अपील सुनने का अधिकार उच्चतम न्यायालय को अवश्य सौंपे क्योंकि 'may' शब्द का प्रयोग किया गया है, न कि 'shall' शब्द। अत: मंशा यह है कि संसद पर यह छोड़ देना चाहिये कि दंड विषयक अपीलों के अधिकार को उच्चतम न्यायालय को सौंपने के विधान को यह पारित करे या न करे। इस संशोधन की पेचीदगी यह भी है कि यदि विधान द्वारा एक बार यह अधिकार उच्चतम न्यायालय को सौंप दिया जाता है तो वाद किसी तिथि को, यदि संसद चाहती है तो, उस विधान का संशोधन उसको रद्द अथवा उसका प्रतिसंहरण कर सकती हैं इसका आशय यह है कि जब तक संसद यह देखती है कि अपील में उच्चतम न्यायालय ऐसे निर्णय पारित कर रही है जो संसद के पक्ष में हैं, संसद का अभिप्राय शक्ति प्राप्त दल से है और जिसका अभिप्राय उस समय के मंत्रिमंडल से है तो उच्चतम न्यायालय उस अधिकार का प्रयोग करती रहेगी। परन्तु जब उस न्यायालय के निर्णय संसद द्वारा पसन्द नहीं किये जाते हैं तो उस अधिकार को वापस ले लिया जायेगा। यह एक खतरनाक प्रस्थापना है; इसका अभिप्राय यह है कि उस अधिकार को बनाये रखने के लिये उच्चतम न्यायालय को इस प्रकार से कार्यवाही करनी चाहिये कि जिससे संसद अप्रसन्न न हो। हम न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिये चीखते रहे हैं और इस स्वतंत्रता के डा. अम्बेडकर एक वीर योद्धा रहे हैं परन्तु जब हम उच्चतम न्यायालय की शक्ति सम्बन्धी विधान का निर्माण करने पर आये, जो उच्च न्यायालय देश की सर्वोच्च न्यायपालिका है, तो हम ऐसे उपबन्ध रखने का प्रयत्न कर रहे हैं जो केवल न्यायपालिका ही नहीं वरन् देश के उच्चतम न्यायालय धर्माधिकरण की अप्रत्यक्ष रूप से जड़ काटेगा। मैं निवेदन करता हूं कि हमको इस पक्ष में नहीं होना चाहिये। व्यवहार विषयक मामलों में उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता कोई अधिक फलदायक नहीं है; दंड विषयक मामलों में उसकी स्वतंत्रता प्रमुख महत्त्व की है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि 20,000 रुपये की एक तुच्छ राशि के किसी मामले का पक्ष या विपक्ष में विनिश्चय हो, परन्तु यदि किसी दंड विषयक मामले का विनिश्चय करने में उच्चतम न्यायालय को अपील सुनने के अधिकार को बनाये रखने के लिये संसद की इच्छानुसार कार्यवाही करनी पड़ती है तो यह उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता का बड़ा भारी अपहरण है। इन सब बातों पर विचार करते हुये मैं निवेदन करता हूं कि हमें यहां और अभी यह

[श्री जसपतराय कपूर]

विधान बनाना चाहिये कि उच्चतम न्यायालय को अपील सुनने की शक्ति होगी और इस विषय के विधान बनाने या न बनाने को हम संसद की सदिच्छा पर न छोड़े। हम इस संविधान में उच्चतम न्यायालय के लिये, न्यायालय के स्थान के लिये, न्यायाधीश के वेतनों के लिये और अन्य बातों के लिये विवरण पूर्ण व्यवस्था कर रहे हैं। परन्तु दंड विषयक अपीलों को सुनने के अधिकार के महत्त्वपूर्ण प्रश्न को हम संसद पर छोड़ रहे हैं कि वह जैसा चाहे विनिश्चय करे। और कौन सी संसद इस विषय पर विचार करेगी? क्या यह वर्तमान संसद है अथवा वह संसद जो इसके बाद नये संविधान के प्रवर्तन में आने के पश्चात् बनेगी? यदि दूसरी संसद है तो इसका अभिप्राय है कि अभी दो वर्ष और। यदि यह मंशा है कि वर्तमान संसद इस उपबन्ध को पारित करे तो उसे हम अभी यहां क्यों नहीं कर लेते? वर्तमान संसद में वे ही सदस्य हैं जो आज यहां उपस्थित हैं। या मैं यह कहूंगा कि जो अभिसमय हमने स्थापित किया है उसके अनुसार तो वह उन सदस्यों की भी बनी हुई नहीं है जो यहां इस समय उपस्थित हैं और जिन्हें इन विचार-विमर्शों में भाग लेने का हक है। अत: मेरा विचार है कि यह संविधान सभा संविधान निर्माण करने वाले निकाय के रूप में वर्तमान संसद की अपेक्षा अधिक प्रतिनिध्यात्मक है और ऐसे महत्त्वपूर्ण विषय को उस निकाय पर, जो संसद के रूप में प्रकार्य करता है, छोड़ने के अलावा इस निकाय द्वारा विनिश्चित किया जाना चाहिये। यदि कोई अपूर्त्त होना चाहे तो यह निष्कर्ष निकाल सकता है—यद्यपि मैं आशा करता हूं कि वह तथ्य नहीं है—कि कुछ सदस्य जो इस निकाय के सदस्य हैं, पर अभिसमय के अधीन संसद में उपस्थित नहीं होते हैं उनके बारे में यह असुविधाजनक समझा जा सकता है कि इस विधान को संसद में लिया जाये यहां कि वे उपस्थित नहीं होंगे। हमने यह अभिसमय स्थापित कर लिया है कि प्रान्तीय विधानमंडलों के सदस्य संसद में उपस्थित नहीं होंगे। अब हम उनसे यह कहना चाहते हैं कि वे इस बात से सहमत हो जायें कि वे इस विषय में कुछ न कहें और अपनी अनुपस्थिति में संसद द्वारा इस विषय के विनिश्चित किये जाने से सहमत हों।

पर मंशा यह है कि यह संसद नहीं वरन् निर्वाचन के पश्चात् जो संसद बनेगी वह इस विधान पर विचार करेगी, इसका अभिप्राय यह है कि इस पूरे के पूरे विषय को कम से कम दो वर्ष तक रोके रखा जायेगा। उस संसद को बनने पर भी उसके समक्ष विचार करने के लिये सद्य महत्त्व के कई विधान होंगे और उसका समय उन अधिक महत्त्व के विधानों के अधिनियम बनाने में लगेगा। इसका यह अभिप्राय हुआ कि आने वाले तीन या चार वर्षों तक यह पूरा विषय रुका पड़ा रहेगा। प्रश्न यह उठता है कि उन अभागे लोगों का क्या होगा जिनको प्रथम बार उच्च न्यायालय के अन्तिम आदेश द्वारा मृत्युदंड दिया गया है। मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर तथा अन्य उनके जैसे विचार वाले शायद यह कहें कि इन थोड़े से अभागे व्यक्तियों की हमें चिन्ता नहीं करनी चाहिये। यदि उनकी ऐसी इच्छा हो तो शायद वे नृशंसतापूर्वक ऐसा कह दें। पर मुझे आशा है कि डा. अम्बेडकर और उनके अन्य मित्र जो उच्चतम न्ययालय दंड विषयक अपीलों के सुनने के अधिकार से वंचित कराने की कार्यवाही में हिस्सेदार हैं—मेरा अभिप्राय श्री टी.टी. कृष्णमाचारी तथा श्री मुंशी से है—उनमें कोई भी इतनी नृशंसतापूर्वक ऐसा सुझाव देने के लिये इच्छुक न होगा। मैं जानता हूं कि डा. अम्बेडकर जो कभी-कभी बाहर से रूखापन प्रकट

कर देते हैं पर उनका हृदय बड़ा कोमल है और यदि मैं कह सकता हूं, यह कहूंगा कि उनका हृदय स्नेहशील भी है। श्री कृष्णमाचारी तो मृदुलता के भंडार ही हैं और श्री मुंशी तो वास्वत में कोमलता की खान हैं। अत: मुझे विश्वास है कि इनमें से कोई भी हमसे मानवजीवन और स्वातन्त्र्य पर इतने सरल रूप में विचार करने के लिये न कहेगा। अत: मैं निवेदन करता हूं कि हमें यहां और अभी इस संविधान में उच्चतम न्यायालय को दंड विषयक अपीलों को सुनने का अधिकार सौंपने का एक निश्चित उपबन्ध बनाना चाहिये।

परन्तु मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि डा. अम्बेडकर और श्री मुंशी के उन तर्कों से यथेष्ट सार है जिनको उन्होंने किसी पूर्व अवसर पर प्रस्तुत किया था कि यदि उच्चतम न्यायालय को अपील के अनिर्बन्धित अधिकार सौंपे जायेंगे तो मामलों का काम बहुत बढ़ जायेगा। यह सच है। न मैं यह सुझाव देना चाहता हूं, न मैंने अपने संशोधन में यह सुझाव दिया है और न शायद किसी अन्य व्यक्ति ने अपने संशोधन में यह सुझाव दिया है कि उच्चतम न्यायालय को अपील का अनिर्बन्धित अधिकार होना चाहिये। हम जो कुछ चाहते है वह यह है कि उसको कुछ विशिष्ट मामलों तक सीमित किया जाये जिनकी संख्या बहुत अधिक नहीं होती। शायद उनकी संख्या साठ या सत्तर से आगे नहीं जायेगी या अधिक से अधिक सारे देश में एक वर्ष में सौ। अपील के अधिकार को सीमित होने दीजिये सर्वप्रथम तो उन मामलों तक जिनमें उच्च न्यायालय ने प्रथम बार अपने अन्तिम आदेश द्वारा मृत्युदंडादेश पारित किया हो जिसका आशय केवल इससे अधिक और कुछ नहीं है कि किसी व्यक्ति को प्रथम बार मृत्युदंड दिया जाता है तो उसे अपील का एक छोटा सा अधिकार होगा। मेरे संशोधन का यही अर्थ है और कुछ नहीं। उन मामलों में जिनमें या तो उस व्यक्ति को अधीन न्यायालय द्वारा विमुक्त कर दिया गया है या उच्च न्यायालय अथवा सत्र न्यायालय के प्रथम आदेश द्वारा उसे मृत्युदंडादेश नहीं दिया गया है वरन् इससे कुछ कम दंडादेश दिया गया है तो उस अभियुक्त के पक्ष में एक निर्णय है चाहे वह विमुक्ति का हो अथवा मृत्यु से कम दंडादेश का हो; और वह निर्णय प्रथम मामले में सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित किया गया है जो उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने की समूची अर्हता रखता हो और जिसको यदि भाग्य उसके पक्ष में है तो निर्णय की उद्घोषणा के दूसरे दिन की उच्च न्यायालय में पदोन्नति पर भेज दिया जाये। अन्य परिस्थिति में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा विमुक्ति का आदेश पारित हो सकता है— एक ऐसे न्यायाधीश द्वारा जो बहुत सक्षम हो, विद्वान हो, बहुत विश्वस्त हो तथा विश्वसनीय हो। प्रश्न यह है कि जब अभियुक्त के पक्ष में पहला निर्णय है तो उसे उच्च न्यायालय द्वारा प्रथम बार पारित किये गये मृत्युदंडादेश की अपील करने का अधिकार होना चाहिये या नहीं? मैं निवेदन करता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि उस अभियुक्त व्यक्ति को ऐसा अधिकार होना चाहिये और ऐसे आदेश की अपील सुनने का उच्चतम न्यायालय को अधिकार होना चाहिये।

मेरे संशोधन का दूसरा भाग यह है कि यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित करता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने के लायक है तो उसकी अपील उच्चतम न्यायालय में होनी चाहिये। आप और किसी में विश्वास न करें पर कम से कम अपने उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों में तो विश्वास करें और आप यह न सोचें कि वे आसानी से ऐसा प्रमाण पत्र दे देंगे यदि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की ऐसा प्रमाण पत्र देने की इच्छा है

[श्री जसपतराय कपूर]

तो आपके पाय यह कहने के लिये ऐसा कौन सा तर्क है कि ऐसे मामलों की भी उच्चतम न्यायालय में अपील करने का कोई अधिकार नहीं होगा? मैं निवेदन करता हूं कि इन विचारों को दृष्टि में रखते हुये यह आवश्यक तथा वांछनीय है कि ऐसी शक्ति उच्चतम न्यायालय को सौंपी जाये।

यदि मेरा कोई भी सुझाव स्वीकार्य नहीं है तो कम से कम एक सुझाव तो स्वीकार्य होगा ही और वह सुझाव एक अन्य संशोधित रूप में मेरे संशोधन संख्या 37 में है जिसमें कहा गया है:

> 'कि उपरोक्त संशोधन संख्या 24 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 112-ख में 'Parliament may' शब्दों के स्थान में 'संसद इस संविधान के प्रारम्भ ही से एक वर्ष के अन्तर्गत अवश्य' शब्द रखे जायें।''

या तो हमारा यह उद्देश्य है कि संसद ऐसे विधान को अवश्य अधिनियमित करे और या हमारी यह मंशा है कि वह ऐसे विधान को यदि न चाहे तो न अधिनियमित करे। यदि आज हम इसके प्रति संशय में पड़े हुये हैं तो बात दूसरी है। परन्तु यदि हमारा सदुद्देश्य यह है कि दंडविषयक अपीलों का मार्ग न रोका जाये और उद्देश्य केवल यही है कि इन बातों पर संसद द्वारा विचार किया जाये तो संसद के लिये यह आभारस्वरूप बना दीजिये कि वह ऐसा विधान अधिनियमित करे और ऐसा विधान इस संविधान के प्रवर्तन में आने से एक वर्ष के अन्तर्गत बन जाये। क्योंकि, अन्यथा जैसा कि मैं निवदेन कर चुका हूं यदि आप 'may' शब्द को यहां बना रहने देते हैं तो संसद को यह अधिकार होगा कि वह उस विधान को बनाये या न बनाये और उस विधान को अधिनियमन करने के बाद भी उसका निरसन या संशोधन करे। इसका फल यह होगा कि यह तलवार सदैव उच्चतम न्यायालय के सिर पर लटकती रहेगी और उनको यह चेतावनी देती रहेगी कि वह ऐसा व्यवहार करे जो संसद को प्रिय हो। जीवन और स्वातन्त्रय की शुद्धता और रक्षा लोकतंत्र का सार है और उनको उच्चतम न्यायालय की रक्षा से वंचित करके इनकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिये।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, जितने संशोधन पेश किये गये हैं वे सब एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न की ओर केन्द्रित हैं कि क्या दंड विषयक मामलों की देश की उच्चतम न्यायालय में अपील होने दी जाये। यदि होने दी जाये तो किन-किन मामलों की। मैं निवेदन करता हूं कि यह विषय एक बड़े सांवैधानिक महत्त्व का हैं हम एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य के लिये एक संविधान अधिनियमित कर रहे हैं। हम संसार में एक सर्वोत्तम लोकतंत्र बना रहे हैं। लोकतंत्र की समस्याओं का चारों ओर से भली प्रकार सामना करना चाहिये। लोकतंत्र का अर्थ है विधि मूलक शासन जो बलपूर्ण शासन का विरोधी है। एकतंत्र तथा सर्वशक्तितंत्र राज्यों में विधि सर्वोच्च नहीं होती है। परन्तु लोकतंत्र का आशय विधि की सर्वोच्चता से है जिसमें कोई भी व्यक्ति चाहे वह सबसे ऊंचा ही क्यों न हो विधि से ऊपर नहीं है। अत: हम सबको विधि का सम्मान करना चाहिये और विधि पालन की भावना उत्पन्न करने के लिये हम सब को विधिपालक नागरिक होना चाहिये और इसी में लोकतंत्र की रक्षा है। हमको स्वयं लोकतंत्रात्मक सिद्धांतों का, लोकतंत्रात्मक

रीतियों का पालन करना चाहिये और विधि का सम्मान करना चाहिये। उस दिन जब कि अनुच्छेद 110, 111 और 112 के सम्बन्ध में इस विषय की चर्चा हुई थी, मैंने यह संकेत किया था कि जहां तक दंड विषयक अपीलों का उच्चतम न्यायालय से सम्बन्ध है, इसमें कमी है। इस बात के खुल जाने से सदन उच्चतम न्यायालय में दंडविषयक अपीलों के अधिकार सम्बन्धी विषय की चर्चा करने के लिये प्रेरित हुआ। आपने उस चर्चा को होने दिया। अत: मेरी तुच्छ सम्मति में उस चर्चा को असंगत कहना पूर्णतया गलत है। सच बात यह है कि उस चर्चा से इस संविधान के मसौदे की कुछ कमजोरियां प्रकट हुई और उसके कारण इतने संशोधन आये।

श्रीमान्, सभा में पेश किये गये संशोधनों की झंझट में कुछ बातें सब संशोधनों में हैं जो मौलिक महत्त्व रखती हैं। अनुच्छेद 111 के अधीन हमने उन व्यवहार-विषयक मामलों की अर्थसम्बन्धी परिसीमाओं के अधीन अपीलें होने दी हैं जिनमें विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है। प्रश्न यह है कि लोगों के जीवन और स्वातन्त्र्य पर कोई परिसीमा लगाना क्या हमारे लिये ठीक होगा। क्या राज्य के एक तुच्छ से तुच्छ व्यक्ति के जीवन और स्वातन्त्रय में और किसी धनाड्य व्यक्ति के जीवन और स्वातन्त्रय में हम भेद विभेद कर सकते हैं? किसी सभ्य राज्य में दंड सम्बन्धी विधि में धनी और निर्धन, महान् और तुच्छ में कोई अन्तर नहीं हो सकता है। व्यवहार विषयक मामलों में यदि गलत विनिश्चय पारित कर दिया जाता है तो समाज को अधिक हानि नहीं होती है। परन्तु यदि आपने किसी एक निर्दोष व्यक्ति के स्वातन्त्रय का हरण कर लिया तो अकथनीय दुष्टता होगी। केवल विधि के उच्चतम न्यायालय में उस मामले के जाने देने से ही विधि की सर्वोच्चता पूर्ण रूप से स्थापित की जा सकती है। राज्य की रक्षा विधि मूलक शासन में लोक विश्वास में निहित है। अन्तिम न्यायालय को अन्तिम न्यायाधिकरण होना चाहिये जो दंड विषयक मामलों में वैध अधिकारों के प्रश्नों का विनिश्चय करे। इस सम्बन्ध में जो प्रश्न उठते हैं वे यह है: (1) क्या अपील का कोई अधिकार दिया जाये, और (2) यदि दिया जाये तो किन परिस्थितियों के अधीन और किन रक्षाकवचों सहित। इसके बाद में यह सवाल उठता है कि क्या इस उपबन्ध को संविधान में प्रविष्ट किया जाये या नहीं। मैं निवेदन करता हूं कि यह विषय बड़े सांवैधानिक महत्त्व का है। यदि मनुष्य का जीवन और स्वातन्त्रय इस सभा के लिये गंभीर विषय नहीं है तब तो मैं समझता हूं कि फिर कोई भी बात विचारणीय नहीं हैं इन संशोधनों में जो प्रश्न उठाये गये हैं वे मौलिक महत्त्व के है, इसलिये मैं समझता हूं कि अन्तिम अपील के अधिकारों को स्वयं संविधान में रखा जाये चाहे वे जो कुछ भी हो। जब कि इस आदरणीय सदन ने बड़ी सावधानी से व्यवहार-विषयक मामलों की अपील के अधिकारों की व्याख्या की है तो यह कोई न्याय नहीं होगा कि वही सदन दंड विषयक मामलों की अपील के अधिकारों की व्याख्या न करे। मेरे विचार से इस विषय को संसद पर न छोड़ा जाये। वास्तव में उसका यह अर्थ है कि इसके बाद बनने वाली संसद वह सभा नहीं जो किसी अन्य स्थान पर विधान सभा के रूप में बैठती है, वरन् आगे बनने वाली संसद साधारण निर्वाचनों के पश्चात् अथवा उससे भी बाद की संसद। अपनी कार्यवाहियों को स्थगित करना और कार्य को एक अपरिचित रचना तथा प्रवृत्ति की भावी संसद द्वारा पूर्ति के लिये छोड़ देना न्याययुक्त नहीं है। दंड विषयक मामलों में सारवत न्याय का आश्वासन देने के लिये विधि की व्याख्या न करने का हमें कोई अधिकार नहीं है। अत: स्वयं संविधान में हमें विधि

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

की व्याख्या करनी चाहिये। हमने संविधान में कितने ही विषयों को प्रविष्ट कर दिया है जो तुलना में महत्त्वपूर्ण नहीं है और हमें इस महत्त्वपूर्ण उपबन्ध को संविधान में रखने से नहीं हिचकिचाना चाहिये।

पहला प्रश्न है कि क्या आप उच्चतम न्यायालय में दंड विषयक मामलों की अपील करने का कोई अधिकार देंगे या नहीं? मैं इस सदन का ध्यान विधि की वर्तमान दशा की ओर आकर्षित करना चाहूंगा। उन दंड-विषयक मामलों की, जिनमें विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है अथवा उन मामलों को, जिनमें अन्य प्रकार से यह दर्शा दिया गया है कि उनमें घोर अन्याय किया गया है, सपरिषद् सम्राट को अपील करने का अधिकार वास्तव में है। इन परिस्थितियों में मैं निवेदन करता हूं कि यदि हम दंड-विषयक मामलों की अपनी उच्चतम न्यायालय में उन्हीं शर्तों के अधीन अपील का कोई अधिकार नहीं देते हैं तो हम एक अधिकार तो छीन लेंगे जो अब दंडविषयक मामलों में वर्तमान है। श्रीमान्, विगत चालीस वर्ष तक की प्रिवी कौंसिल की दंड-विषयक अपीलों के अध्ययन से यह प्रकट होगा कि अपील का यह अधिकार बहुत ही आवश्यक है क्योंकि बहुत से निश्चित रूप से गलत दोषारोपण के मामले रद्द कर दिये गये। विशेषकर हत्या के मामले में यह बहुधा होता है कि साक्ष्य के स्थान में स्थानीय विरोध और शक के कारण किसी व्यक्ति पर दोषारोपण किया जाता है। इस प्रकार कभी-कभी निर्दोष व्यक्ति भी फांसी पर लटका दिये जाते हैं कभी-कभी हमारे न्यायालय के विनिश्चयों पर बाह्य विचारों का प्रभाव पड़ता है। यदि ऐसे विनिश्चयों की उच्चतम न्यायालय में अपील की जाती है तो वे उस पर निष्पक्ष विचार करेंगे और औचित्य तथा साक्ष्य के समुचित विचार के आधार पर उसका विनिश्चय करेंगे। अत: मैं निवेदन करता हूं कि दंड विषयक मामलों में उपयुक्त आधार पर अपील का अधिकार होना चाहिये। वे उपयुक्त मामले कौन-कौन से हैं? मैं निवेदन करता हूं कि उपयुक्त मामले वे हैं जिनमें विधि का सारवत प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है। हम वास्तव में विधिमूलक शासन या लोकतंत्र की स्थापना कर रहे हैं। अत: यदि किसी पर विधि की सारवत त्रुटि के कारण दोषारोपण किया गया है तो मैं समझता हूं कि अपील के लिये यह एक अच्छा आधार होना चाहिये। प्रिवी कौंसिल द्वारा हस्तक्षेप करने के लिये विधि के सारवत प्रश्नों का सदैव यथेष्ट आधार समझा गया है और इस अधिकार को कम से कम हम न छीने अथवा उसका स्थगन न करें जो एक शताब्दी से भी अधिक काल से वर्तमान और महत्त्वपूर्ण रहा है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि विधि का सारवत प्रश्न एक अच्छा आधार होना चाहिये। इस सदन के कुछ लोगों को यह भय है कि यदि विधि के सारवत प्रश्न पर हम अपील होने देंगे तो सरकार का प्राधिकार, कार्यपालिका का प्राधिकार दुर्बल हो जायेगा। मैंने वास्तव में यह कानाफूंसी सुनी कि दोषारोपण बहुत से होने चाहिये जिससे कि कार्यपालिका के प्राधिकार की रक्षा हो सके और यह कि यदि हम बहुत अपील होने देंगे तो कार्यपालिका का प्राधिकार जर्जर हो जायेगा और राज्य का क्षेम संकट में पड़ जायेगा। पर मैं इसका बिल्कुल उल्टा समझता हूं। यदि हम एक स्वतंत्र न्यायाधिकरण द्वारा विधि की सर्वोच्चता का पोषण होने रहने दे तो इस राज्य के क्षेम का वह आधार होगा। लोगों का संतोष, न्याय के प्रशासन में उनका विश्वास राज्य को सुरक्षित बनाने में

मुख्य रूप से सहायक होंगे। दंड विषयक मामलों में हमारे उच्चतम न्यायालय के अन्तिम क्षेत्राधिकार को यदि ले लिया जाता है तो उससे जो अंसतोष होगा वह गुप्त होगा और राज्य के लिये घातक होगा। यह सहज सम्भाव्य है कि कभी-कभी न्यायालय द्वारा कार्यपालिका की भी उपेक्षा की जायेगी, और इसी के लिये न्यायालय होते हैं अर्थात् राजनैतिक विचारों पर ध्यान दिये बिना न्याय का प्रशासन करने के लिये। यदि कार्यपालिका यह समझती है कि मामलों की किसी विशिष्ट श्रेणी में, जो चाहे राजनैतिक हों अथवा अन्य प्रकार के, कोई अपील न हो, अथवा किसी प्रकार की कोई संक्षिप्त प्रक्रिया हो, अथवा साक्ष्य के कोई विशेष नियम हों तो इसके लिये वह सदैव विधान मंडल से निवेदन कर सकती है। यह विधान मंडल के कहने की बात है कि कौन सी विधि पारित की जायेगी। विधान मंडल की स्वतंत्रता की भी प्रत्याभूति करनी होगी और एक स्वतंत्र विधान मंडल एक विशिष्ट रीति से दंड विषयक मामलों में प्रयोज्य साक्ष्य की विधि, शास्ति की विधि और प्रक्रिया की विधि निहित कर सकती है। उच्चतम न्यायालय में अपील को रोकने के लिए कोई रुकावट नहीं होनी चाहिये। विधि के सारवत प्रश्नों पर उच्च न्यायालय में अपील करने का यदि हम अधिकार दे दें तो वह विधान मंडल के लिये जैसा वह चाहे वैसी विधि बनाने की स्वतंत्रता की प्रत्याभूति होगी। यदि विधान मंडल कोई ऐसा नियम पारित करता है जो विधि के आधार पर अपील करने के अधिकार में रुकावट डाले तो ऐसा कहने का अधिकार विधान मंडल को है। बहुमत होने के कारण कार्यपालिका सदैव विधान मंडल के पास अपने दृष्टिकोण को ले कर उपस्थित हो सकती है और इस प्रकार कार्यपालिका की सर्वोच्चता अथवा स्वतंत्रता का पोषण किया जा सकता है परन्तु उस विधि की सीमा के अन्तर्गत जिसको विधान मंडल निर्धारित करे, परन्तु उच्चतम न्यायालय को अपने सर्वोत्तम ज्ञान के अनुसार सारवत न्याय करने की शक्ति होनी चाहिये। इस तर्क के आधार पर मैं कहता हूं कि विधि के सारवत प्रश्न पर अपील का अधिकार देना चाहिये। इस प्रस्थापना से बचने के लिये कोई तर्कयुक्त बात नहीं है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि आगे बनने वाली संसद पर हम इस विषय को न छोडें। मान लीजिये उच्च न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति को फांसी लगाने का आदेश प्रथम बार दिया जाता है और मान लीजिये कि उच्च न्यायालय का वह विनिश्चय गलत है। यह बहुधा होता है कि स्थानीय विरोध के कारण उस अभागे व्यक्ति के लिये मृत्यु का आदेश पारित कर दिया जाता है। क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि वह व्यक्ति क्या करे? क्या हम उससे तब तक के लिये धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करने के लिये कहें जब तक आगे बनने वाली संसद द्वारा उपयुक्त विधि पारित की जाती है। क्या इस अरसे में वह फांसी पर चढ़ जाये? क्या इस आशा में वह फांसी पर चढ़ जाये कि आगे बनने वाली संसद द्वारा समुचित विधि पारित की जा रही है? मेरे विचार से इसमें टालमटोल होने देने से परिणाम बहुत भयंकर तथा बड़ा ही विद्रोहात्मक होगा। अत: मैं निवेदन करता हूं कि किसी अभियुक्त व्यक्ति को विधि के सारवत प्रश्न पर दंड-विषयक मामले में उच्चतम न्यायालय को अपील करने का अधिकार यहां और अभी दिया जाये। एक बहुत तुच्छ विषय का मामला अभी प्रिवी कौंसिल में ले जाया गया। किसी व्यक्ति पर उपदंडाधिकारी द्वारा एक छोटे से अपराध का दोषारोपण किया गया। अपील में सत्र-न्यायाधीश द्वारा उसको विमुक्त कर दिया गया। सरकार ने उच्च न्यायालय

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

में अपील की जिसने उसे दोषारोपित किया। अभियुक्त ने प्रिवी कौंसिल में अपील की। प्रिवी कौंसिल ने असामान्य स्पष्टता सहित साक्ष्य में सारवत दौर्बल्य बताया और उसको विमुक्त कर दिया। यह तर्क प्रस्तुत किया गया था कि वह एक छोटा मामला है, अत: प्रिवी कौंसिल के हस्तक्षेप के योग्य नहीं है। प्रिवी कौंसिल के न्यायाधिपतियों ने बताया कि वह अनुचित दोषारोपण का मामला है और उसको विमुक्त कर देना चाहिये। अत: यदि हम विधि के सारवत प्रश्नों पर अपील नहीं होने देंगे तो हम अपने उत्तरदायित्व से हट रहे हैं। लोगों को जेल में सड़ाने या बाद में लम्बित विधान के आधार पर फांसी देने में कोई न्याय नहीं होगा। अत: हमें यहां और अभी एक ऐसा अनुच्छेद पुर:स्थापित करना चाहिये जो मनुष्यों पर गलत दोषारोपण किये जाने से उनको बचा सके।

श्रीमान्, विधि के सारवत प्रश्न पर दंड सम्बन्धी मामलों की उच्चतम न्यायालय में अपील होने देने से एक और प्रकार का क्षेम भी है। अभी उच्चतम न्यायालय में विधि के विषयों पर मतभेद है। यह अनिवार्य है क्योंकि विधान साधारण सिद्धांत पर विचार व्यक्त करता है और विशेष मामलों में उसके प्रयोग से विभिन्न उच्च न्यायालयों में परस्पर मतभेद की गुंजाइश हो जाती है। मेरा निवेदन यह है कि यदि विभिन्न न्यायालय विधि के प्रश्नों पर विरोधी विचार रखते हैं तब तो उच्चतम न्यायालय में अपील होने देने के लिये यह एक आधार होगा क्योंकि इसी प्रकार से विधि को एकरूप तथा सुसंगत बनाया जा सकता है। यह कई बार हुआ है कि प्रिवी कौंसिल में अभियुक्त व्यक्तियों को उच्च न्यायालयों में विरोधी मत के आधार पर विशेष अनुमति मिल गई है जिनका सही रूप में निश्चय होना चाहिये। न्यायाधिपतियों ने ऐसे मामलों में विशेष अनुमति दे दी है यद्यपि प्रारम्भ में उनको यह पूर्ण विश्वास नहीं था कि किसी विशिष्ट मामले के तथ्य का कोई विरोध वास्तव में हुआ है, पर उन्होंने संशय से लाभ उठाने दिया और अधिक विवरण पूर्वक विचार कर लेने के लिये विशेष अनुमति दी। अन्तत: प्रिवी कौंसिल के उन मामलों के विनिश्चयों ने दंड सम्बन्धी मामलों में विधि के महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों पर नया प्रकाश डाला है। दंड-सम्बन्धी विषयों में प्रिवी कौंसिल के पिछले तीस या चालीस वर्ष के निर्णयों के पढ़ने से यह विदित होगा कि बहुत से मामलों ने विधि के अनेक कठिन तथा जटिल प्रश्नों को सुलझाया है और विधि को एकरूपता दी है। यदि विधि को एकरूप बना दिया जाता है तो इसका फल यह होगा कि सत्र न्यायालयों और उच्च न्यायालयों में दंड-विषयक अपीलों की संख्या में कमी हो जायेगी और आगे चल कर मितव्ययता होगी। इन परिस्थितियों मे मैं निवेदन करता हूं कि विधि के प्रश्न का कुछ सम्मान करना चाहिये और कम से कम विधि के सारवत प्रश्न पर हमें किसी व्यक्ति को उच्चतम न्यायालय में हस्तक्षेप करने के लिये निवेदन करने देना चाहिये। उच्चतम न्यायालय का मूल्य है यदि वह दंड विषयक मामलों में उच्चतम नहीं है तो? मेरे विचार से उच्चतम न्यायालय को इस विषय में वास्तव में सर्वोच्च बना कर विधि की सर्वोच्चता की प्रत्याभूति सच्चे रूप में करनी चाहिये। श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि हम अनुच्छेद 112 तो पारित कर ही चुके हैं। वह उच्चतम न्यायालय को दंड सम्बन्धी मामलों सहित सब मामलों में विशेष अनुमति देने की शक्ति प्रदान करता है।

***एक माननीय सदस्य:** समय समाप्त हो गया।

***अध्यक्ष:** क्या आप अधिक समय लेंगे?

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मुझे कुछ अधिक समय लगेगा।

***अध्यक्ष:** तो फिर सदन कल प्रात:काल आठ बजे तक के लिये स्थगित हुआ।

इसके पश्चात् सभा मंगलवार, 14 जून सन् 1949 ई. के प्रात:काल आठ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।